❀ श्री श्रीगौरांगविधुर्जयति ❀

श्रीमाधुरीबाणी

स्वामीजी के प्रिय शिष्य श्रीमाधुरीजी कृत

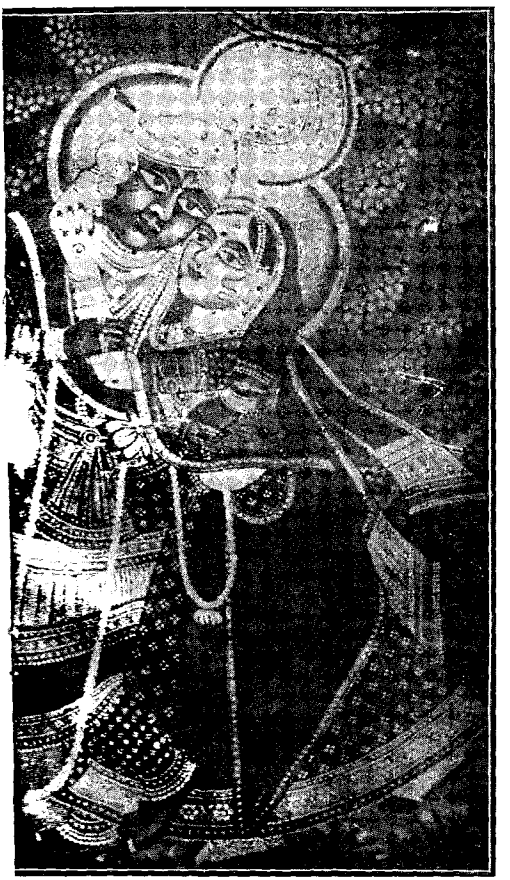

प्रकाशक—बाबा-कृष्णदास

पुस्तक मिलने का पता :—

(१) श्री रामनिवास खेतान का दूकान
सबामणशालिग्राम मन्दिर के नीचे
लोईबाज़ार. (वृन्दा)

(२) लाला चेतरामजी, कोसीकलाँ, मथुरा

(३) बाबा कृष्णदास,
क्यरप—बाबा आनन्ददासजी
कृष्णगंगा आस्थान
(मथुरा)

❀ श्री गौरांगविधुर्जयति ❀

श्री माधुरी वाणी

श्री श्री रूपगोस्वामी चरण के प्रिय शिष्य
श्री माधुरी जी कृता

श्रीकृष्णचैतन्य प्रभु नित्यानन्द ।
हरेकृष्ण हरेराम राधे गोविन्द ॥
भज-निताई गौर राधेश्याम ।
जप-हरे कृष्ण हरे राम ॥

परम रसिक वर पूज्य श्री गौरांगदास जी के कृपा-पात्र, सेठ वनखण्डि के आत्मज, कोसी (वरसाना) निवासी चतुर्भुज (हरि-सम्बन्धि नाम चैतन्यदास उपनाम चेतराम जी) के संपूर्ण आर्थिक सहाय से मुद्रिता

ता० १४-३-३६
गौरपूर्णिमा
प्रथमावृत्ति १०००
मूल्य ॥=)

प्रकाशक
बाबा कृष्णदास
कुसुमसरोवर
पो० राधाकुण्ड
जि० मथुरा

सर्वाधिकार सुरक्षित है ।

श्री माधुरीजी की गुरु परम्परा

श्रीमन्नारायण, श्रीब्रह्मा, श्रीनारद, श्रीवेदव्यास, श्रीमध्वाचार्य्य,
श्रीपद्मनाभ, श्रीनरहरि, श्रीमाधव, श्रीअक्षोभ,
श्रीजयतीर्थ, श्रीज्ञानसिन्धु, श्रीमहानिधि,
श्रीपुरुषोत्तम, श्रीव्यासतीर्थ, श्रीलक्ष्मीपति,
श्रीमाधवेन्द्र

|

श्रीईश्वर

|

श्री राधाकृष्ण मिलित विग्रह
श्रीकृष्ण चैतन्य
महा प्रभु

|

तस्य पार्षद श्री रूप गोस्वामी महोदय

|

श्री माधुरी जी

केसरोसिंह यादव, कल्याण प्रिंटिंग प्रेस, राजामण्डी, आगरा।

❀ भूमिका ❀

ब्रजमाधुरी सागर में माधुरी जी का स्थान बहुत ऊँचा है। आप श्री रूप गोस्वामि चरण के शिष्य, ब्रजनिष्ठ परमरसिक महान् आत्मा हुए। मथुरा गोवर्द्धन मार्ग पर अड़ींग नामक ग्राम है। वहाँ से लगभग ढ़ाई कोश दक्षिण दिशा में माधुरी-कुण्ड विद्यमान है। वहाँ आप का भजन स्थान है आप के नाम से ही वह स्थान माधुरी कुण्ड नाम से विख्यात है। गोस्वामी श्री नारायण भट्ट जी द्वारा विरचित ब्रजभक्ति-विलास ग्रंथ के मत में श्री प्रियाजू की अति सुहावनी माधुरी नाम्नी सखी के विहारस्थल के कारण उस स्थान तथा कुण्ड का नाम माधुरीकुण्ड है। कुण्ड के पास एक सुन्दर मन्दिर है। मथुरा निवासी कृष्णगंगा स्थान के महन्त बाबा श्री बलरामदास जी की देख रेख में है। वाणीकार के जन्म तथा तिरोभाव समय का ठीकर पता नहीं मिलता है। किन्तु केलि माधुरी नामक ग्रंथ के अन्तिम दोहा से निश्चित किया जा सकता है कि आप का स्थिति काल सम्बत् सोलह सौ से लेकर सम्बत १७०० पर्य्यन्त है।

दो०—सम्बत सोलह सो असी सात अधिक हियधार।
केलि माधुरी छटि लिखी श्रावण वदि बुधबार॥

आपके द्वारा विरचित ग्रंथों से निश्चित पता चलता है। कि आप श्री रूप गोस्वामी जी के कृपा पात्र शिष्य थे।
यथा—श्री चैतन्य सुदृष्टि तें विविध भाँति अनुराग।
पिय प्यारी मुख कमल को पायो प्रेम पराग॥ ३०७॥

रूप मंजरी प्रेम सों कहत बचन सुख रास।
श्री बंशीवट माधुरी होहु सनातन वास ॥ ३०८ ॥
बंशीवट माधुरी

वही रूप मंजरी ही ब्रज में प्रसिद्ध श्री रूप गोस्वामीजी हुए।
सदा सनातन रूप विराजै। बरनत ही जिय अति ही लाजै ॥
केलिमाधुरी।

विपिन सिंधु रस माधुरी कृपा करी निज रूप।
मुक्ता मधुर बिलास के निज कर दिये अनूप ॥ १२६ ॥
केलिमाधुरी

आपके द्वारा विरचित ग्रंथ समूह—

उत्कण्ठामाधुरी, बंशीवटविलासमाधुरी, केलिमाधुरी, वृन्दावन विहारमाधुरी, दानमाधुरी, मानमाधुरी, होरी माधुरी, प्रियाजू की बधाई प्राप्त हैं। बंशीवटविलासमाधुरी, तथा वृन्दावनविहारमाधुरी का नामान्तर बंशीवटमाधुरी, व वृन्दावन माधुरी है। अनुमान किया जाता है कि इनके अतिरिक्त और भी अनेक पद होंगें। आपने प्रत्येक माधुरी में अपने इष्ट एवं उपास्यदेव भगवान् श्रीकृष्णचैतन्य महाप्रभु का मंगलाचरण किया है। यथा—

उत्कण्ठामाधुरी में

श्री चैतन्य स्वरूप को मन बच करूँ प्रणाम।
सदा सनातन पाइये श्री वृन्दाबन धाम ॥ १ ॥
गौरनाम अरु गौरतनु अन्तर कृष्ण स्वरूप।
गौर साँवरे दुहुन को प्रगट एक ही रूप ॥ २ ॥

बंशीबट माधुरी में—

चारु चरण चैतन्यचन्द्र मन बच कर ध्याऊँ।
सदा सनातन रूप बास वृन्दावन पाऊँ ॥ १ ॥

केलिमाधुरी में—

श्री चैतन्य चरण चित धरों। वन विनोद कछु वरनन करों॥

वृन्दावनमाधुरी में—

कृष्ण रूप चैतन्य की सदा सनातन केलि।
गिरिवन पुलिन निकुंज गृह द्रुम द्रोणी वन बेलि॥१॥

दानमाधुरी में—

निशिदिन चित चिन्तत रहों श्री चैतन्य सरूप।
वृन्दावन रस माधुरी, सदा सनातन रूप॥ १॥

मान माधुरी में—

कृष्ण रूप चैतन्य घन, तन शत मुकुर प्रकाश।
सदा सनातन एक रस, विहरत विपिन विलास॥१॥ इति।

उत्कण्ठा माधुरी में ३ कवित्त २०३ दोहा। वंशीवट-माधुरी में ३६ कवित्त ५ सवैया १४ रोला ३२ चौपाई १ सोरठा २२० दोहा। वृन्दावन माधुरी में १२ कवित्त २ सवैया ३१ चौपाई ३ सोरठा ४५ दोहा। केलि माधुरी में ६ कवित्त ६२ चौपाई १ छन्द १ सवैया ११ सोरठा १ छप्पै १५ दोहा ६ रोला। दान माधुरी में १७ कवित्त ३ सोरठा १६ दोहा। मान माधुरी में १६ कवित्त १५ सवैया ६ सोरठा ६ दोहा। होरी माधुरी में ६ पद तथा प्रिया जू की बधाई में दो पद हैं। उत्कण्ठा माधुरी में वाणीकार की असहनीय विरह वेदना, तीव्र अनुराग, उत्कण्ठामयी चरम चाह की झलक विशद रूप से वर्णित है। जो महान् करुण रस से भरी हुई है। ग्रंथकार ने निज हृदय नन्दन वन से चाह कल्पलतिका को उघाड़ कर सरस दिखाया है जो भाव पुष्प तथा प्रेम रूप आश्चर्य्य फल से सुसज्जित है तथा जिसके पोर पोर सरस शृङ्गार रस से सुरसित हैं जिसके रूप, रस गन्धादि से आकृष्ट

होकर रसिक भ्रमरगण व्रज उपवन में झुंड के झुंड भ्रमण करते हैं, तथा जो राग रूप राजा के आधीन है और वैधी भक्ति रूप सुदृढ़ प्राचीर से वेष्टित है। बाणीकार की विरह वेदना श्री रघुनाथदास गोस्वामी जी रचित विलाप कुसुमाञ्जली को द्योतक है। जान पड़ता है कि उत्कण्ठा माधुरी की रचना विलाप कुसुमाञ्जली के आधार पर हुई है। यहाँ पर कुछ दोहे हम उद्धृत करते हुए समन्वय दिखाते हैं—

उत्कण्ठा माधुरी में—

श्री वृन्दावन स्वामिनी करि सुदृष्टि इहि ओर।
वृष्टि करौ अनुराग की कृपा कटाक्षन कोर॥
अहो लड़ैती बिन कहे जानि लेउ जिय बात।
चरण तिहारे संग बिन मोहि न कछू सुहात॥
पलक ह्वै रहे कोटि सम अलप कलप सम होय।
जो उपजै जिय में सदा समझि सकै नहिं कोय॥
कहि कहि काहि सुनाइये सहि सहि उपजै शूल।
रहि रहि जिय ऐसे जरै दहि दहि उठै दुकूल॥
विरह अग्नि उर में बढ़ी तप्यौ अवनि तनु जाय।
सुरत तेल तापर परै कह किहि भाँति सिराय॥
यह उत्कंठा की लता चली वेगि मुरझाय।
संग दामिनी श्यामघन जो बरषै नहिं आय॥
रोम रोम तन जरि उठै बरि बरि उठै शरीर।
कब छिरकोगे आनि कै कृपा कटाक्षन नीर॥
गिरिवन पुलिन निकुंज गृह सकों देखि नहिं नैंन।
सदा चकित देखत फिरों कहुँ न धरत चित चैन॥
कालिन्दी कर वत लगै चक्र लगे शशि भाय।
जो कबहूँ उन सुखन की परै सुरति जिय आय॥

पवन लगे पाहन मनों सेज लगै सम भान।
भोजन जल ऐसौ लगै गरल कियौ जनु पान॥
फूल लगै फलका हिये वसन सिली मुख मोहि।
सबहि सोंज उलटी परी, विना एक पिय तोहि॥

इत्यादि १० से ३० पर्य्यन्त देखिये।

इस प्रकार तीव्रानुराग न होने से साधक किंवा सिद्ध भक्तों की व्रज प्राप्ति असम्भव है। यही वाणीकार ने दर्शाया है। श्री सनातन गोस्वामिचरण ने भी निज वृहद्भागवतामृत नामक ग्रंथ में श्री गोपकुमार-प्रबन्ध के छल से व्रज प्राप्ति का पूर्व स्वरूप इस प्रकार दिखाया है। यथा—

तत्रैवोत्पद्यते दैन्यं तत्प्रेमापि सदा सतां।
तत्तच्छून्यमिवारण्य सरिद्गिर्य्यादिपश्यतां॥
सदा हाहारवाक्रान्तवदनानां तथा हृदि।
महासन्तापदग्धानां स्वप्रियं परिमृग्यताम्॥ख० २।५

सदा महार्त्त्या करुणस्वरैरुदन्नयामि रात्रींदिवसांश्च कातरः।
न वेद्मि यद्यद् सुचिरादनुष्ठितं सुखाय वा तत्तदुतार्तिसिन्धवे॥
ख० २।६।

श्री रघुनाथदास गोस्वामीपाद ने स्वरचित विलाप-कुसुमाञ्जलि में इस प्रकार विरह वेदना की झलक तीव्र रूप से दरसाई है।

त्वदलोकनकालाहिदंशैरेव मृतं जनं।
त्वत्पादाब्जमिलल्लाक्षाभेषजैर्देवि जीवय॥
देवि ते चरणपद्मदासिकां विप्रयोगभरै दावपावकैः।
दह्यमानतराकायवल्लरीं जीवय क्षणं निरीक्षणामृतैः॥
व्याघ्रतुण्डायते कुण्डं गिरीन्द्रोऽजगरायते।
शून्यायितं गोष्ठं सर्व्वं जीवातु रहितस्य मे॥

हे देवि ! हे स्वामिनी जू। तुम अपने अदर्शन रूप काल सर्प के तीव्र दंशनों से मृत प्राय इस जन को चरण कमल संयुक्त महावर रूप अमृत रस से जीवित करो। देवि ! तुम्हारे वियोग रूप दावाग्नि से जलती हुई मेरी शरीर रूप लता को दर्शन रूप अमृत सिंचन से बचाओ । हे जीवनाधार आप से रहित मेरे लिये राधाकुण्ड बघेर का मुख, गोवर्द्धन अजगर सर्प के तुल्य और समस्त व्रज शून्यमय हो रहा है।

यदि प्राणवल्लभ का सरस आलिंगन इस देह में नहीं हुआ तो अवश्य देहान्तर में प्राप्त होगा। यथा—

या होरी के खेल को खेल कहूँ ह्वै जांउ।
कै सौंधौ ह्वै दुहन कों अंग अंग लपटाँउ॥
कै गुलाल ह्वै लाल के परों लोचननि जाय।
कै पिचकारी प्रिया को हूजे कौन उपाय॥
कै केशर के रंग में कीजे जाय प्रवेश।
तब क्यों हू कछु पाइये वा सुख को लव लेश॥

इत्यादि ६६ से १०६ दोहा देखिये। उत्कण्ठा माधुरी॥

यहाँ श्री रूपगोस्वामी द्वारा विरचित पद्यावली का एक श्लोक रसिकों के सामने रखते हैं। यथा—

पञ्चत्वं तनुरेतु भूतनिवहाः स्वांशे विशन्तु स्फुटं
धातारं प्रणिपत्य हन्त सिरसा तत्रापि याचे वरं।
तद्वापीषु पयस्तदीयमुकुरे ज्योति स्तदीयागंन
व्योम्नि व्योम तदीयवर्त्मनि धरा तत्तालवृंतेऽनिलं॥

प्राण वल्लभ के विमल पावन सरोवर में जल, शरत् चन्द्रमा नामक दर्पण की कांति में कांति, आगँन के आकाश में आकाश; विहार मार्ग में मार्ग, मधुमारुत नामक वीजना में

पवन बन कर प्रियतम को सुख दूँगी। यह केवल तत्सुख का तात्पर्य है।

कविवर सूरदास जी ने भी कहा है:—

का यह सूर अजिर अवनि तनु तजि अगास प्रिय भवन समै हौं।
वाय बीज वापी जल क्रीडा तेज मुकुर महँ सब सुख लैहौं॥

बंशीवट विलासमाधुरी में वृन्दाकन तथा जमुनातट की सुहावनी शोभा का वर्णन करते हुए प्रिया प्रियतम के बंशीवट कुञ्ज में विविध विलास रस को दिखाया है। उसमें एक परम आस्वादनीय विषय वर्णन किया है—यमुनाजी में नौका विहार करने के समय नाव पर श्री प्रियाजू के कोमल कमल के कर्ण फूल पर मुग्ध होकर एक भ्रमर मधुर गुंजार करता हुआ घूमने लगा श्री स्वामिनी जू भयातुर हो उसे अपनी सुकुमार भुज-लता द्वारा उड़ाने की चेष्टा करने लगी, परन्तु अपने प्रयास में असफल रहीं। तब श्री लाल जू ने अपने हस्त कमल से भौंरे को उड़ा कर कहा।

सावधान हू जे प्रिये विकल होत केहि काज।
मधुसूदन तौ गृह गयौ लीने संग समाज॥

इतनी-सी बात सुनकर हा क्या मेरे प्राणवल्लभ अन्तर्द्धान हो गये हाय हाय में अभागी हूँ। हे मधुसूदन! हा मधुसूदन! आप कहाँ चले गये इस प्रकार उच्च स्वर से विलाप करने लगीं। यह रस शास्त्र में प्रेम वैचित्री अवस्था करके वर्णित है। उज्वलनील-मणि प्रभृति ग्रंथ देखने से इसका पता चलता है। इस माधुरीवाणी में से बहुतसी लीलाएँ चुन चुन कर व्रज के रासमण्डलीकार लीलानुकरण द्वारा भक्तमण्डली को सुख दिया करते हैं श्री व्रजलाल बौहरे जी अपनी मण्डली द्वारा यह सब लीलाएँ अति सुन्दर भाव से दरसाते थे।

श्री रूप गोस्वामी प्रभृति आचार्य्य चरणों का यह हार्दिक आशय था।

ब्रजभाषा के प्राचीन कवियों में श्री माधुरी जी मुख्यतम हैं इसमें रंचक मात्र सन्देह नहीं हैं। जिन्होंने माधुरी-वाणी नहीं देखी किम्वा नही सुनी वह सब माधुरी जी के सम्बन्ध में अथवा उनकी वाणी के सम्बन्ध में अपरिचित हैं, किंतु एक-बार देखने से उन्हें अवश्य कहना होगा कि माधुरीवाणी सर्वोपरि है। मिश्र-बन्धु विनोदकार ने माधुरी जी को साधारण कवियों में जो लिखा है सो अपरिचित तथा बिना अनुसंधान के कारण ही, ज्ञात होता है स्यात् विनोदकार ने यह वाणी नहीं देखी होगी। यदि आप एक बार देखते तो इस प्रकार कभी नहीं लिखते। अधिक क्या कहूँ यह वाणी सामने उपस्थित है, रसिकगण स्वयं विचार करलें। इस माधुरीवाणी में विशेषता यह है कि इसके प्रत्येक पद श्री रूपादिक छः गोस्वामियों द्वारा विरचित श्लोक समूह के आधार तथा भाव को लेकर रचे गये हैं। इसमें एक भी ऐसा पद नहीं हैं जो छः गोस्वामी जी के आधार पर नहीं रचा गया हो। ग्रन्थ वृद्धि के कारण हम यहाँ प्रत्येक पदका समन्वय नहीं कर सके। रसिक पाठकगण इन पदों को लेकर छः गोस्वामी रचित श्लोकों से मिलाकर आनन्दानुभव करें।

केलिमाधुरी में प्रिया प्रियतम के दिव्य केलिका का अलौकिक वर्णन है।

श्री वृन्दावन माधुरी में श्रीवन का सरस वर्णन है—

देखहु प्रिये विपिन की शोभा। उपजत है कछु मन की लोभा।
छाँडहु लता मान घर संग। ह्वै है कछुक रंग में भंग॥
कहुँ सुरँग दारिम सुमनालो। कहुँ रस भरे करक फल पाली।

कहूँ तमाल कदम्ब रसाला। कहुँ डोलत मधुपन की माला॥
कहुँ बोलत कोकिल कल-बानी। लोलत कहूँ लता सरसानी।

इन सब का आधार रूप श्री रूप गोस्वामी जी के श्लोक देखिये।

कचिद्भृंगीगीतं कचिदनिल भंगी शिशिरता।
कचिद्वल्लीलास्यं कचिदमलमल्लीपरिमलः॥
कचिद्धाराशालो कनक फल पाली रस भरो।
हृषीकाणां बृन्दं प्रमोदयति बृन्दावनमिदम्॥

श्री विदग्ध माधव नाटक में।

विहार सबै वन को तन में जुर्‌यौ रमि कै मम प्राणन में॥
कदली कुसुमावलि कुंदलता, विकसे अलि अम्बुज आनन में।
शुक सारस कोक कपोत सिखी प्रगटी पिकु पंचम गानन में॥
नव बैन कुणे सुरे रंग खरे बिहरें नित काम के कानन में॥माधुरी

बर्होल्लासे वसति शिथिलां केशभारः सुकेश्याः
पश्यास्येतामलकवितति चारु भृंगावलीषु
स्मेरास्येन्दो रुदयति कला फुल्लहेमाब्जकोशे
नेत्राञ्चल्याश्चकितहरिणी चातुरी माधुरीभूः॥
श्रीमन्नासा सुतिल कुसुमे बंधुजीवाधरश्रीः
कुन्दे दन्तावलि विकसितं कैरवे चारुहास्यं।
बल्लीवृन्दे तनुरनुपमा गुच्छसत्कुड्मलादौ
लक्ष्मीर्वक्षोरुह मुकुलयो र्बाहुवल्ली मृणाले॥
पीनश्रोणि विपुलपुलिने कोमलोरुकदल्यां
रक्ताम्भोजे करचरणयोः कापि शोभा विभाति।
वृन्दारण्य! त्वयि निवसति व्यस्तरूपा प्रिया मे
सामस्त्येनोल्लसति तु ममाऽत्राति धन्यांक देशे॥

वृन्दावन शतक

इस प्रकार श्री रघुनाथदास गोस्वामी के रचित मुक्ता-चरित, श्री कविराज गोस्वामी रचित गोविन्द लीलामृता-दिक समस्त गोस्वामी ग्रंथों में भीवर्णित है।

दानमाधुरी में रसराज श्रीकृष्ण हास्य परिहास रस के आस्वादन के लिये स्वयं दानी बनकर श्री जी और ललिता-दिक सखीयों से दान की याचना करते हुए विविध हास्य परिहास कर रहे हैं। यह सब विषय श्री रूप गोस्वामी विरचित दानकेलिकौमुदी तथा श्री रघुनाथदासगोस्वामी विरचित दानकेलिचिंतामणि प्रभृति ग्रंथों में सरस वर्णित है। मानमाधुरी में श्री राधिका जी अपने प्राणाधार प्रियतम श्रीकृष्ण के श्यामल अंग के कोटिदामिनी चमकन में अपने श्री अंग का प्रतिविम्ब देख अन्य नायिका भ्रम से मानिनी हो बैठीं। जब सखियों के बहु प्रकार यत्न से मान शैथिल्य नहीं हुआ तब श्री ललिता जी की युक्ति से प्रियतम अपने श्री अंग को महीन वस्त्र से ढक कर प्रिया जी के चरणों में नमित हो बैठ गये। तब श्री राधिका ने प्रतिविंब को न देख शिथिल मानिनी तथा लज्जिता हो प्रियतम को आलिंगन किया। यह सब लीला श्री रूपगोस्वामी प्रभृति पूर्वाचार्य्य रचित उज्वल नीलमणि प्रभृति ग्रंथ देखने से पता लगता है।

इस के अतिरिक्त होरी माधुरी भी परम प्रशंसनीय वस्तु है। होरी माधुरी के पद समूह बरसाना तथा नन्दगाँव के मन्दिर में रंगीली के समय गाये जाते हैं। माधुरी जी की होरी व्रज में प्रसिद्ध है। व्रज के प्राचीन भजनानंदी महा-त्माओं के पास प्रायः हस्तलिखित माधुरी बाणी देखने में आती है। व्रज के प्रसिद्ध महात्मा नित्यलीला प्राप्त श्री बाबा रामकृष्णदास जी महाराज को यह बाणी परम प्रिय

थी। आप नित्य पाठ में इस वाणी को लेते थे तथा अनुगत वैष्णव गण को नित्य पाठ करने को उपदेश देते थे। माधुरी सचमुच ही माधुरी है। पहिले मैंने जयपुर में यह वाणी छपवाई थी। किन्तु जल्दी तथा अनवधान के कारण छपाई में अशुद्धियाँ बहुत रह गयी थीं। अतः रसिकों के लिये पठन पाठन में बहुत असुविधा होती थी। इस लिये रसिकों से क्षमा चाहता हूँ। सम्प्रति पूज्य माननीय (बड़े गुरुभ्राता) बाबा श्री गौरांगदास जी की कृपा इंगित से तथा व्रज के भजनानन्दी प्राचीन वैष्णवों के औत्सुक्य से पुनर्वार यह ग्रंथ प्रकाशन करने में बाध्य हुआ हूँ। छन्द पाठ अशुद्ध न हो इसका यथा सम्भव ध्यान रखा गया है। परन्तु प्राचीन वाणी होने के कारण बहुत स्थानों में सन्देह रह गया। तथापि तीन चार प्राचीन पुस्तकें मिलाकर पाठ देखा है यदि फिर भी अशुद्धि रह गयी हो तो तृतीय संस्करण में शुद्ध कर प्रकाशित करने की चेष्टा करेंगे। प्रत्येक में कुछ ना कुछ पाठ भेद है। पूज्य गौरांगदास जी के कृपापात्र वरसाना (कोसी) निवासी, सेठ बनखण्डि के सुपुत्र, गौरनिष्ठ, लाला चतुर्भुज (हरिसम्बन्धिनाम चैतन्यदास) (उपनाम चेतराम जी) के संपूर्ण आर्थिक सहाय से इस कठिन समय में यह ग्रंथ रत्न पुनः प्रकाशित हुआ है। प्रभु से प्रार्थना यह है कि आप अपने मनोवाछित इच्छा की प्राप्ति करें। परिशेष में आगरा प्रतापपुरा निवासी डाक्टर पूर्णचन्द्र शर्म्मा तथा नमकमन्डी आगरा निवासी हरिभक्त गोपालदास जी को धन्यवाद देता हूँ कि आप दोनों सर्व प्रकार सुविधा सहाय देकर ग्रंथ मुद्रण में फल भागी हुए हैं।

विनीत—**वैष्णवदासानुदास कृष्णदास** (कुसुमसरोवर)

श्रीमाध्व-गौडीय सुभाषित रत्न भण्डार

महाकाव्य विभाग—श्रीगोविन्दलीलामृत, श्रीकृष्ण-भावनामृत, श्रीचैतन्यचरितामृत महाकाव्य, श्रीमाधव महोत्सव, श्रीगौरकृष्णोदयमहाकाव्य, संकल्पकल्पद्रुम।

खंडकाव्यविभाग—प्रेमपत्तन, आश्चर्य्यरासप्रबन्ध, चमत्कारचन्द्रिका, प्रेमसम्पुट, व्रजरीतिचिन्तामणि, संकल्पकल्पद्रुम, (विश्वनाथ) मुक्ताचरित, श्रीकृष्णान्हिक कौमुदी।

दूतकाव्यविभाग—हंसदूत, उद्धवसन्देश, शुकदूत,

नाटक विभाग—श्रीजगन्नाथवल्लभनाटक, विदग्धमाधव, ललितमाधव, दानकेलिकौमुदी, चैतन्यचन्द्रोदयनाटक, दानकेलिचिन्तामणि, संगीतमाधवनाटक, प्रेमाख्यनाटक।

चम्पूविभाग—श्रीगोपालचम्पू, श्रीआनन्दवृन्दावनचम्पू, श्रीगौरांगचम्पू, मधुकेलिवल्ली, राधामाधवोदय, रामरसायन, कौतुकांकुर, प्रहसनकाव्य, शृंगारहारावली।

अलंकारविभाग—अलंकारकौस्तुभ, काव्यकौस्तुभ, साहित्यकौमुदी, भक्तिरसामृतशेष, भक्तिरसामृतसिन्धु, उज्वलनीलमणि, भक्तिरसतरंगिनी।

छन्दः शास्त्र विभाग—छन्दः कौस्तुभ, छन्दः समुद्र।

व्याकरण विभाग—हरिनामामृतव्याकरण, प्रयुक्ताख्यातचन्द्रिका, धातुसंग्रह, सूत्रमालिका, शीघ्रबोध व्याकरण।

दर्शनशाखा—गोविन्दभाष्य, सिद्धान्तरत्न (भाष्यपीठक) प्रमेय रत्नावली, वेदान्तस्यमन्तक, प्रमाणलक्षण, कथालक्षण, तत्वसंख्यान, तत्वविवेक, तत्वोद्यत।

सिद्धांतग्रंथ—षट्सन्दर्भ, वृहद्भागवतामृत, लघुभागवता-

मृत, श्रीकृष्णभक्तिरत्नप्रकाश, भक्तिसिद्धान्तरत्न, श्री राधा-कृष्णार्च्चनदीपिका, श्रीभक्तिरसामृतसिन्धुबिन्दु, उज्वलनील-मणिकिरण, वृहद्भागवतामृतकण, रागवर्त्मचन्द्रिका, ऐश्वर्य्य-कादम्बिनी (विश्वनाथ), ऐश्वर्य्यकादम्बिनी (बलदेव), माधुर्य्यकादम्बिनी, माध्वसिद्धान्तसार, सर्वसंवादिनी ।

कडचाविभाग—"मुरारिकडचा" किंवा चैतन्यचरितामृत, गोविन्ददास जी का कडचा, स्वरूप गोस्वामी जी का कडचा,

शतकविभाग—आर्य्याशतक, चैतन्यशतक, नवद्वीप-शतक, श्यामानन्दशतक, वृन्दाबनशतक ।

भाष्यविभाग—भगवद्गीताभाष्य, ब्रह्मसूत्रभाष्य, अणु-भाष्य, ऋग्भाष्य, ऐतरेयोपनिषद भाष्य, तैत्तरीयभाष्य, इसावास्य भाष्य, काठकोपनिषद भाष्य, छान्दोग्यभाष्य, आथर्वणीयोपनिषद्भाष्य, तलवकारोपनिषदभाष्य, राधा-माधवभाष्य, गायत्रीभाष्य ।

संहिताविभाग—विष्णुसंहिता,

वृत्तिविभाग—तत्वोद्योतटीका की वृत्ति, कठोपनिषद् की वृत्ति, केनोपनिषद की वृत्ति, छान्दोग्य की वृत्ति, माण्डुक्य की वृत्ति, गौरविनोदिनी वृत्ति ।

टिप्पनी विभाग—व्याकरण की टिप्पिनी, न्यायशास्त्र की टिप्पनी ।

तात्पर्य्य विभाग—गीतातात्पर्य्यनिर्णय, श्रीभागवत-तात्पर्य्य, महाभारततात्पर्य्य ।

खण्डनविभाग—उपाधिखण्डन, मायावादखण्डन, प्रपञ्च-मिथ्यात्वानुमानखण्डन, न्यायसुधा, न्यायामृत ।

स्मृतिविभाग—हरिभक्तिविलास, सत्क्रियासारदीपिका, संस्कारदीपिका, साधनदीपिका, पद्धतिप्रदीप, श्री कृष्णाभिषेक,

भक्तिचन्द्रिकापटल, सदाचारस्मृति, तन्त्रसारसंग्रह, साधनदीपिका।

व्याख्या विभाग—बृहद्वैष्णवतोषणी, बृहद्भागवतामृत की दिग्दर्शिनी, हरिभक्तिविलास की दिग्दर्शिनी, लघु वैष्णवतोषणी, क्रमसन्दर्भ (बृहत और लघु) ब्रह्मसंहिता टीका, गोपालतापिनी की टीका, दुर्गमसंगमनी (भक्तिरसामृत सिन्धु की), लोचन रोचनी, (उज्वल नीलमणि की) सारंगरंगदा (कर्णामृत की टीका), योगसारस्तव की टीका, कविकर्णपूरकृत भागवत की टीका, दशश्लोकीभाष्य, रसिकास्वादिनी, राधाकृष्णार्च्चनदीपिका, गायत्रीव्याख्याविवृति, श्रीकृष्णवल्लभा, सारार्थदर्शिनी भक्तहर्षिणी, सारार्थवर्षिनी, भक्तिसारप्रदर्शिनी, दानकेलिकौमुदी की टीका, ललितमाधवटिप्पनी, विदग्धमाधव की विवृति, आनन्दचन्द्रिका, वैष्णवानन्दिनी, हंसदूत की टीका, सुखवर्त्तनी, सुबोधिनी, श्रीचैतन्यचरितामृत की टीका, गोपालतापनी का भाष्य, ईशोपनिषद का भाष्य, गीताभूषणभाष्य, लघुभागवतामृत की टिप्पनी, (सारंगरंगदा और रसिकरंगदा, तत्वसन्दर्भ की टीका, स्तवमाला विभूषणभाष्य, छन्दः कान्तिमाला, कृष्णभावनामृत की टीका, स्तवावली काशिका, सदानन्दविधायिनी, बालतोषणी, संशयशातनी (भागवत की), रसिकरंगदा (पद्यावली की), नामार्थसुधा, अर्थरत्नालपदीपिका, (रसामृत की) रसिकालहादिनी (भागवत की) तत्वोद्योत की टीका, तत्वसंख्यान की टीका, तत्वविवेक की टीका, प्रपंचमिथ्यात्वानुमानखण्डन की टीका, मायाबाद खण्डन की टीका, विष्णुतत्वविनिर्णय की टीका, ईशावास्य की टीका, प्रश्नोपनिषद की टीका, उपाधिखण्डन की टीका, विजयध्वजीटीका। (क्रमशः)

पूर्वत:—

विरुदावली विभाग—गोविन्दविरुदावली, गोपालविरुदावली, निकुंजकेलिविरुदावली, गौरांगविरुदावली, श्रीकृष्णविरुदावली।

महात्म्य विभाग—मथुरामहात्म्य, व्रजभक्तिविलास, वृन्दाबनमहिमामृत, वृन्दावनलीलामृत, वृहद्व्रजगुणोत्सव, व्रजप्रदीप।

परिचय विभाग—गौरगणोद्देशदीपिका, वृहत्कृष्णगणोद्देशदीपिका, लघुकृष्णगणोद्देशदीपिका, श्रीपण्डितगोस्वामीशाखानिर्णयामृत, नरहरिशाखानिर्णय, रघुनन्दनशाखानिर्णय, गौरगणचन्द्रिका, चैतन्यसंहिता।

सन्दर्भ विभाग—श्रीकृष्णचैतन्यसन्दर्भ, श्रीगदाधरसन्दर्भ, षट्सन्दर्भ, भक्तिभूषणसन्दर्भ।

स्तोत्र विभाग—स्मरणमंगलस्तोत्र, स्तवावली, स्तवमाला, स्तवामृतलहरी, लीलास्तव, निकुञ्ज रहस्यस्तव, नरसिंहनखस्तोत्र, द्वादशस्तोत्र, कृष्णप्रेमामृतस्तोत्र, युगलपरिहारस्तोत्र, श्रीरूपसनातनस्तोत्र, गौरांगलीलामृत।

शिक्षा विभाग—शिक्षाष्टक, मनःशिक्षा।

रहस्य विभाग—वृषभानुपुररहस्य, नन्दीश्वरचन्द्रिका, श्रीचैतन्यरहस्य।

प्रार्थना विभाग—वृहत्प्रार्थनामृततरंगिणी, नरोत्तमठाकुर महाशय की प्रार्थना, प्रेमभक्तिचन्द्रिका।

उत्सव विभाग—व्रजोत्सवचन्द्रिका, व्रजोत्सवाल्हादिनी, व्रजोत्सवचन्द्रिका।

चरित विभाग—श्रीचैतन्यचरितामृत, (बंगभाषा) श्रीचैतन्यचरितामृत (व्रजभाषा) श्रीचैतन्यभागवत, चैतन्यमंगल, अद्वैत-

प्रकाश, अद्वैत मंगल, प्रेमविलास, कर्णानन्द, नरोत्तमविलास, श्रीनिवासचरित्र, रसिकमंगल, भक्तमाल, गौरलीलामृत, प्रेमामृत, जयदेवचरित्र, अद्वैतविलास, चैतन्यविलास, श्रीकृष्णचैतन्योदयावली, बाल्यलीलासूत्र, अनुरागवल्ली, भक्तिरत्नाकर, श्रीसीताचरित्र, भक्तचरितामृत, श्रीचैतन्यमहाभागवत, अमियनिमाईचरित, चरितसुधा।

गीति काव्य—गीत गोविन्द, संगीत माधव।

सञ्चित ग्रंथ—पद्यावली, भक्तिरत्नावली।

पदावली विभाग—(बंगभाषा में) क्षणदागीतिचिन्तामणि, श्री मुरारीगुप्त की, श्री ज्ञानदास की, श्रीवृन्दावनदास ठाकुर की, कृष्णदास कविराज की, श्रीनरहरि सरकार ठाकुर की, श्रीलोचनदास की, श्री रामानन्दवसु की, श्रीवासुदेव घोष की, श्रीवंशीवदन की, श्रीनयनानन्द की, श्रीदेवकीनन्दन की, श्रीशिवानन्द की, श्री यदुनन्दन की, श्री यदुनन्दनदास की, श्री परमानन्दजी की, श्री बलरामदास की, श्री कानुदास की, श्रीदुःखी कृष्णदास की, श्री गोविन्द कविराज की, श्रीगोविन्द चक्रवर्त्ति की, श्री कविशेखर की, राजानृसिंह देव की, श्रीगोविन्द आचार्य्य की, श्री रामचन्द्र कविराज की, राजावीर हाम्वीर की, रायवसंत की, मोहनदास की, वल्लभदास की, श्रीकविवल्लभ की, श्रीराधावल्लभ की, श्रीहरिवल्लभ की, श्रीवलदेवदास की, श्रीप्रेमदास की, श्रीदिव्यसिंह की, श्रीगतिगोविन्द की, श्रीजगदानन्द की, श्रीराधामोहन की, श्रीघनश्याम की, श्रीनरोत्तमदासठाकुर की, श्रीवैष्णव दास की, श्रीमुकुन्दानन्दजी की, श्रीपीताम्बरदासजी की, श्रीमुकुन्ददासजी की, श्रीचन्द्रशेखरजी की, श्रीराधारमणचरणदासदेव की।

अनुवाद विभाग—श्री रूपचिन्तामणि, पाटपर्य्यटन,

गोकुल मंगल, जगन्नाथमंगल, जगन्नाथ विजय, गोविन्द विजय, गोविन्द मंगल, मुकुन्दमंगल, कृष्ण प्रेम तरंगिणी।

पद्धति विभाग—श्री गोपालगुरुपद्धित, श्री ध्यानचन्द्र गोस्वामीकृतपद्धति, भावनासारसंग्रह, साधनामृतचन्द्रिका और पद्धति।

विविध विभाग—(उत्कलभाषा में)—

महाभावप्रकाश, चैतन्यचन्द्रोदय, चैतन्यचन्द्रोदय कौमुदी, चैतन्यभागवत, चैतन्यविलास, ब्रह्माण्डमंगल, चैतन्यवली, जगन्नाथचरितामृत, प्रेमतरंगिणी, प्रेमलहरी, ललितलोचना, गौरचिन्तामणि, युगलरसामृत लहरी, तत्वतरंगिणी, प्रेम-चिन्तामणि, रासपञ्चाध्यायी, कृष्णगर्भगीता, गोपीचिन्ता, भक्तिरत्नावली, उपासना चन्द्रोदय, पूर्णतम चन्द्रोदय, श्रीकृष्ण-तत्वचन्द्रोदय, नवानुराग, व्रजविहार, मुकुन्दमाला, कृष्ण-चन्द्रानन चम्पू, प्रेमरस चद्रिका, मुक्ति चिन्तामण, भजन तत्व, कृष्णकर्णामृत, उडियाभागवत, चैतन्यचरितामृत, कोलाहल-चौतिशा, कलाकौतुक, प्रेमसुधानिधि, विदग्धचिन्तामणि। इन के अतिरिक्त और प्राचीन तथा अर्वाचीन असंख्य ग्रन्थ विद्यमान हैं। ग्रन्थ वृद्धि के कारण समस्त नहीं लिखे गये। समय के अनुसार उद्धृत करेंगे।

—कृष्णदास

॥ इति ॥

अशुद्धि शुद्धिपत्र

अशुद्धि	शुद्धि	पृ०	प०
रौम रौम	रोम रोम	२	१५
कछु	कछू	८	१६
तक	एक	१६	२२
वैश	वैस	२	१२
दिशासों	दिशिसों	२२	२२
जनत	जतन	२५	१६
करि	कर	२७	८
छूटक	छूटत	३३	२
निरखो	निरखि	३६	१६
निरखि	निरखत	३६	१७
गई	गइ	३६	१७
हुय	बहु	५०	१४
सुरभी	सुरभी	५२	३
दो०	सो०	५२	१७
पीय	पिय	५२	१७
समझ	समय	५३	१८
बस	बस	५४	१३
और	(×)	५५	१
नहीं	नहिं	५५	१०
चतुराई	चतुराइ	५६	४
कछु	कछू	५६	१८
कछु	कुछ	५७	१
जोइ जोइ	जो जो	५७	२
मन	मनहि	५७	२
देखे	देखेउ	५७	४
नैकु	नैकुजु	५७	५
कियो	कीन्हो	५७	६
बल	सुबल	५७	६
कैसे	कैसेहु	५७	१०
अलिन	अलिगन	५६	६
सुवास	सुवास	५६	१५
समाज	समाय	६०	४
पै	(×)	६१	६
जहाँ	जहँ	६१	७
मालि	माल	६२	७
हँस	हंस	६४	२१
भरि	भरे	६६	१२
कपढ	कपट	६७	१२
नहीं	नहिं	६७	२१
वैश	बैस	७०	७
जगाति न	जगातिन	७१	१०
बिसाले	बिसाल	७१	१४
कलि	कल	७३	६
उसे	डसे	७३	२२
हरे	हेर	७६	१५
हुराई	दुराई	८०	२१
देखि देखी	देखि देखि	८०	१५-१६
प्रीतिविंव	प्रतिविंव	८२	४

❀ श्री श्री गौरांगविधुर्जयति ❀

अथ उत्कंठा माधुरी

दो०—श्री चैतन्य स्वरूप को मन बच करूं प्रणाम।
सदा सनातन पाइये श्री वृन्दावन धाम ॥ १ ॥
गौर नाम अरु गौर तनु, अन्तर कृष्ण स्वरूप।
गौर साँवरे दुहुन को, प्रगट एक ही रूप ॥ २ ॥
तिनके चरण प्रताप ते, सर्व सुलभ जग होय।
गौर साँवरे पाइये, आप अपनपौ खोय ॥ ३ ॥
वृन्दावन विहरहिं सदा, गहे परस्पर बांह।
लालच तिनके मिलन को, उपजि परो जिय माहिं ॥ ४ ॥
उत्कंठा अंकुर कहूँ, उग्यो हिय में आय।
ताकी तुम रक्षा करौ, कबहुँ उखरि मति जाय ॥ ५ ॥
डुलहि न पवन झकोर ते, जौलों नहिं दृढ़ मूल।
विघ्न न कोऊ कर सकै, रहहु सदा अनुकूल ॥ ६ ॥
पूरणमासी तुम करो, सदा अमृत की सींच।
यह अंकुर भीजो रहै, सदा प्रेम की कीच ॥ ७ ॥
अहो विशाखा सहचरी, तुम सब रस की मूल।
यह उत्कंठा वेलि ज्यों, नख सिख फूलै फूल ॥ ८ ॥

हो ललितादिक तुम सबै, मिलि सींचौ रस तोय।
यह उत्कंठामाधुरी, वेग सफल ज्यों होय॥ ९॥
श्री वृन्दावन स्वामिनी करि सुदृष्टि इहि ओर।
वृष्टि करौ अनुराग की कृपा कटाक्षन कोर॥ १०॥
अहो लड़ैती विन कहे जानि लेउ जिय बात।
चरण तिहारे संग विन, मोहि न कछू सुहात॥ ११॥
पलक ए रहे कोटि सम, अलप कलप सम होय।
जो उपजै जिय में सदा, समझि सकै नहिं कोय॥ १२॥
कहि कहि काहि सुनाइये, सहि सहि उपजै शूल।
रहि रहि जिय ऐसे जरै, दहि दहि उठै दुकूल॥ १३॥
विरह अग्नि उर में बढ़ी, तप्यौ अवनि तनु जाय।
सुरत तेल तापर परै कह किहि भांति सिराय॥ १४॥
यह उत्कंठा की लता चली वेगि मुरझाय।
संग दामिनी श्यामघन जो बरषे नहिं आय॥ १५॥
रोम रोम तन जरि उठै बरि बरि उठै शरीर।
कब छिर कौंगे आनि कै कृपाकटाक्षन नीर॥ १६॥
गिर वन पुलिन निकुंज गृह, सकों देखि नहिं नैंन।
सदा चकित देखत फिरों, कहुँ न धरति चित चैन॥ १७॥
कालिंदी कर बत लगै, चक्र लगै शशि भाय।
जो कबहूँ उत सुखन की, परै सुरति जिय आय॥ १८॥
पवन लगे पाहन मनों, सेज लगै सम भान।
भोजन जल ऐसौ लगै, गरल कियौ जनु पान॥ १९॥

फूल लगै फलका हिये, बसन सिलीमुख मोहि।
सबहि सोंज उलटी परी, बिना एक पिय तोहि॥ २०॥
सबै अंधेरौ देखिये, जो सत सूर प्रकाश।
गौर सांवरे चन्द बिन, नयनन कोंन हुलास॥ २१॥
बोलन खेलन हसन सुख, मिटी सबन की आस।
जे मन के सब सुख हुते, भये दुखन की रास॥ २२॥
दुख संकट अरु शूल सब, जो कछु हैं हिय मांहि।
देखत ही मुख दुहुन कौ, सबै सुखद ह्वै जांहि॥ २३॥
वा मुख देखन को कहो, कीजे कौन उपाय।
कहा करौं कासों कहों, परी कठिन अति आय॥ २४॥
ये लोचन आतुर अधिक उनहिं पीर कछु नाँय।
जलते न्यारी मीन ज्यौं तड़फि तड़फि अकुलाय॥ २५॥

सो०—कान कथा मन ध्यान, रसना नाम अधार धरि।
नयनन गति नहिं आन, बिन देखे मुख माधुरी॥ २६॥

दो०—गिरि बन पुर बीथिन सबै, रहौं निहार निहार।
कोऊ कहुँ नहिं पाइये, वा मुख की उनिहार॥ २७॥
वामुख की आशा लगी, तजी आस सब जोग।
अब स्वासा हू तजेगी, जो न बने संजोग॥ २८॥
कहा करूं कासों कहूँ, को बूझे कित जाँउ।
बन बन ही डोलत फिरो, बोलत लेले नाँउ॥ २९॥
जो बन बन डोलत रहों, बाँध मिलन की फेंट।
अन जाने ही होयगी, कहूँ अचानक भेंट॥ ३०॥

कोउ नाम तो करन पथ, कहूँ परेगों जाय।
बोलत बोलत कबहुँ तो, बोलहिंगे अकुलाय॥ ३१॥
हो प्यारी हो प्राण पति, अहो प्रेम प्रतिपाल
दुख मोचन रोचन सदा, लोचन कमल विशाल॥ ३२॥
ऊंचे सुरसों टेर के, कहूँ पुकारि पुकारि।
कृष्ण कृष्ण गोविंद हरि, रटोंसु बारहि बारि॥ ३३॥
हो निकुंज नागरि कुँवरि, नव नेही घन श्याम।
नैंनन में निस दिन रहों, अहो नैंन अभिराम॥ ३४॥
अहो लड़ेती लाड़िली, अलखि लड़ी सुकुमारु।
मन हरनी तरुनी तनक, दिखरावहु मुखचारु॥ ३५॥
गुणनि अगाधा राधिका, श्री राधा रस धाम।
सब सुख साधा पाइये, आधा जाको नाम॥ ३६॥
अहो सलोने साँवरे, सुन्दर सुखद स्वरूप।
मन मोहन मोहन हिये, महा मोद को रूप॥ ३७॥
रतिनिधि रसिनिधि रूपनिधि, अरुनिधि प्रेम हुलास।
गुण आगर नागर नवल, सुख सागर की रास॥ ३८॥
नवल किशोरी भामिनी, गोरी भोरी वाम।
महा मोहनी माधुरी, मोहन मन अभिराम॥ ३९॥
मृगनैंनी आमोदनी, महामोद की रास।
गिरि वन पुलिन विलासिनी, मोमन करहु निवास॥ ४०॥

५०—कुंज-कुंज केलि मिलि नवला नवेली भाँति,
करुना कटाक्ष करि करनि में धारिहों,

रातिहू की बात सब प्रीतम के परिचय,
कहिहों प्रगट प्रात नेंकु न बिसारिहों।
माधुरी सो मन की हिलग बाहि भाँनि करि,
प्रानहूँते प्यारी प्रिय सहचरि बारिहों,
अब तब जब कब लगिये रहत तक,
कुंवरि कृपा के कब ऐसी मोसों करिहों ॥ ४१ ॥
अहो मन मोहन जी कोन हेत हमहीं सों,
कहा ऐसो निघट कठोर मन कीनों है,
तुम तो फिरत नित आना कानी दिये इत,
में सों तन मन प्राण तुम ही कों दीनों है।
मन बच क्रम कछु और न सुहात मोहि,
मन तो तिहारी माधुरी के रस भीनो है,
चैन न परत नेंक बैनन जनैये कहा,
नेना मेरे निपट कठिन नेंम लीनों है ॥ ४२ ॥
जोपै तो तिहारो मन भयो है कठिन अति,
देखत हौं याही दुख दै है तो सिराइगौ,
जाये तो तिहारे जिय ऐसी पै बसी है आय,
तुम सों हमारो कहौ कहाँ धौं बसाइगौ।
एक बार अपने को दूरिसों दिखाई देकें,
जाहु फिर चले कान्ह कहा घटि जायगौ,
तुम तो दया के दानी जानि के मन चानि,
चतुर सुजान देखि मन तो सिराइगौ ॥ ४३ ॥

दो०—अनियारे कारे कहूँ, कजरारे कल बाम ।
बाचक चाहनि चाह को, मोचक सदा सकाम ॥ ४४ ॥
मोहन मोहन सब कहैं मोहन साँचो नाम ।
मोहन मोहन के कछू क्यों मोहत सब गाम ॥ ४५ ॥
जा कारन छोड़ी सबै लोक वेद कुल कानि ।
सो कबहूँ नहिं भूलि कै देत दिखाई आनि ॥ ४६ ॥
सदा चटपटी चित बसै, समुझि सकै नहिं कोय ।
कोऊ खटपटी हिये में कहत लटपटी होय ॥ ४७ ॥
एक बार तो आय कै, नैनन ही मिलि जाउ ।
सौंह तुमें जो सांवरे नेंकु दरश दिखराउ ॥ ४८ ॥
ऊरध स्वांस समीर सों, सीतल हैं गई देह ।
तन मन डूबो जात है, इन नैनन के मेह ॥ ४९ ॥
अहो प्राण पति प्राण यह, नैनन में रहि आय ।
पलक एक लों पाइहों जो पहुँचौगे धाय ॥ ५० ॥
रोकति हों करि जतन सों, छिन छिन यहै सिखाय ।
ए आवत हैं प्राण-पति मति निकसौ अकुलाय ॥ ५१ ॥
जान सुगम राखनि कठिन, यह प्राणन की टेक ।
सम्पुट के घन सार ज्यों, कीने जतन अनेक ॥ ५२ ॥
आस ओषिधी मेलि करि, नेह बास सों बांधि ।
मुख सासन बासन कियो, धरयो जतन सों सांधि ॥ ५३ ॥
पल में छिन में निमिष में, जो नहि आव हु नाथ ।
फिर पाछे पछताउगे, ज्यौं न परेगौ हाथ ॥ ५४ ॥

प्राण गये जो आयहौं तौ न सरेगौ काज।
अहो प्राण-पति प्रेम की उलटि परैगी लाज॥ ५५॥
प्राण गये की कछु नहीं, मति प्रीतम दुख होय।
यही समझि मन में सदा, छीजत नैनन रोय॥ ५६॥
प्राण गए प्रीतम मिले, कहा प्रेम में स्वाद।
तन छूटे धन पाइये, मनहुँ कहां अह्लाद॥ ५७॥
मरे कहा हम हौयगे, जो जानें इहि बात।
तरपत ही बीतै सदा, नैनन की दिन रात॥ ५८॥
जा रसना नामावली, करी सदा गुण-गान।
जिन कानन तब अमृत-मय, करी कथा रस पान॥ ५९॥
जिन हाथन सौं हेत सों, करी टहल बहु भांति।
जे लोचन मुख माधुरी, निरखि, न कबहु अघाति॥ ६०॥
जिन ऐसौ साधन कियो, यह निष्फल क्यों जाय।
सो सरीर क्यों सांवरे, दीजे सलिल बहाय॥ ६१॥
चतुर सिरोमणि हौ बड़े, तुमहीं करो विचार।
ताको यह गति बूझिये, कै कृमि कै विट छार॥ ६२॥
परम सनेहीं होंय जो, सो शरीर तजि जांहि।
व्याध सदेही पाइये, यह विवेक तुम मांहि॥ ६३॥
भक्त अभक्त मिले सबै, कीने एक समान।
भक्त सदेह बुलाइये, तौ यह भजन प्रमान॥ ६४॥
एक बार इन लोचननि, देखों नवल विहार।
इनहीं हाथन दुहुन को, करौं बैठि शृङ्गार॥ ६५॥

इनहीं पांवन प्रगट ही, वन बन डौलौं संग।
सैंनन में ही समझि हौं, कछुक बात रस रंग॥ ६६॥
जो कबहूँ तुम कहोगे, बिना प्रेम बिन भाउ।
या शरीर संजोग कौ, कैसो बने उपाव॥ ६७॥
जब करुणा-मय देखिहौं, लोचन कमल विशाल।
सबहिं प्रेम संजोगता, उपजि परै तेहि काल॥ ६८॥
कुबिजा कों सूधी करी, ध्रुव सदेह गयो लोक।
ए बातें सुनि सुनि सबैं, मिटेउ हिए कौ शोक॥ ६९॥
पारवती के खंड में, सबै जुवति है जांय।
हम को ऐति कठिन कहा, श्री वृन्दावन मांहि॥ ७०॥
कीये को सब करत है, दीये को सब देत।
अन कीये को कीजिये, यहै प्रेम कौ हेत॥ ७१॥
नहिं संजम सुमिरन कछु, नहिं साधन नहिं नेम।
नहिं मन में समझौ कछु, कहा कहावत प्रेम॥ ७२॥
इन लोचन की लालसा, कबहुँ न मनते जाय।
ज्यों प्यासे कों नीर बिन, और न कछु सुहाय॥ ७३॥
नैन दुखी तब दरस बिनु, देत छिनहिं छिन रोय।
नैनन के दुख हरन कौं, तुम बिनु नाहिन कोय॥ ७४॥
तुमसे हम को एक है, हमसे तुमहिं अनेक।
हो प्रीतम सो कीजिये, रहै प्रेम की टेक॥ ७५॥
जो मोसों मोसी करौ, नांहिं कछु मोहि ठौर।
तुम हो तेसी कीजिये, अहो रसिक शिर मौर॥ ७६॥

परम तुच्छ हों त्रणहुँ ते, मांगत सकल सुमेर।
तन घट में चाहत कियौ, सत सागर के घेर॥ ७७॥
करत मनोरथ अति कठिन, विकल कहत मुख बैन।
जो मन को दुर्लभ सदा, चाहत देखौं नैन॥ ७८॥
सुगम करौ सब सांवरे, पै सुदृष्टि जो होय।
अन-करनी करनी करहु, करनी करहु न कोय॥ ७९॥
ज्यों सागर की लहरतें, कांपत हिये अनेक।
उन अगस्त-मुनि छिनक में, कियो आचमन एक॥ ८०॥
हाहा करि त्रण दन्त धरि, जांचत हूँ कछु दीन।
कोटि जतन जो कीजिये, जल बिन जिये न मीन॥ ८१॥
और करौ तब कीजियेहु, विविध भांति की केलि।
एक बार संग खेलिये, मिलि होरी के खेल॥ ८२॥
जब होरी के खेल की, सुरत परत जिय आय।
वही सुरत मन में बसै, सबहिं सुरति मिट जांय॥ ८३॥
जागत सोवत चलत चित, बैठत यही विचारि।
हो हो होरी कबहुँ तो, उठति पुकारि पुकारि॥ ८४॥
सदा संग मिलि खेलिये सपने हूँ में जाय।
दुरि भाजहु जनु लाल के, मुख गुलाल लपटाय॥ ८५॥
मूंदि रहों इन लोचननि, अंचल ओट दुराय।
तुम अंचल यह सांवरौ, भरे अचानक आय॥ ८६॥
जौ लों सोऊँ स्वप्न में, तौ लौं यह सुख होय।
जागे कछू न देखिये तरफि पुकारों रोय॥ ८७॥

बा दुख कौ नहिं पारहू, कहों कहां लों बैंन।
कै समुझै जाकै लगै, कै लागें जहँ नैन॥ ८८॥
इन खेलन की लालसा, लगी रहै जिय मांहि।
या मन के दुख हरन को, बिना कुंवरि कोउ नांहि॥ ८९॥
वार बार जांचत यही, विह्वल बिकल विहाल।
कब लिपटाऊं लाल के, घोरि अरगजा भाल॥ ९०॥
कब आंजहुगी करन सों, लोचन कमल विशाल।
ता छिनु छवि ऐसी फवी, जनु कुरग परि जाल॥ ९१॥
कर मीडहिं लोचन कुँवरि, रहै न कछु संभारि।
तौलों केसर के कलश, देँहुँ शीसते ढारि॥ ९२॥
मुख सोंधों लपटाय कै, अरु वेंदा दऊँ भाल।
कब देखहु इहिं भाँति सों, लपटे बदन गुलाल॥ ९३॥
कुंवरि सैन समुझाय है कर मुरली हरि लेहु।
नीकी भाँति बनाय कै, वैस जुवति को देहु॥ ९४॥
तब अपने कर कुँवर को, वेश सखी को देँउ।
वा मुख की तब माधुरी, निरखि बलैया लेँउ॥ ९५॥
इत खैलन के खेल को, कलमलात दिन रैन।
तरफि तरफि छिनु छिनु परों, निमिष न आवत चैन॥ ९६॥
हो हो कहत पुकारि हों, अहो श्याम सुनि लेउ।
होरी संग न खेलि हों, तो होरी है देउ॥ ९७॥
खेल कहाँ लों बरनियें जो उपजै जिय माँहि।
उठैं मनोरथ हिये में, फिर फिर हिये समाँहि॥ ९८॥

वा होरी के खेल को खेल कहूँ ह्वै जांउ।
कै सोधों ह्वै दुहन कों, अङ्ग अङ्ग लपटांउ ॥ ९९ ॥
कै गुलाल ह्वै लाल के परों लोचननि जाय।
कै पिचकारी प्रिया को हूजे कौन उपाय ॥१००॥
कै केशर के रंग में कीजे जाय प्रवेश।
तब क्यों हू कछु पाइये वा सुख को लव लेश ॥१०१॥
कै फुलवारी फूलिये, तिन फूलन में जाय।
जिन फूलन के भावते, भूषन करें बनाय ॥१०२॥
कै सोवें जा सेज पै, सेज सोइ है जाँउ।
कै क्यों हूँ है मधुकरी, मुख सुगन्धि लपटाँउ ॥१०३॥
पिय प्यारी जहँ पग धरे, होंहु तहाँ की धूरि।
जो समझे नहि प्राण पति, रहों ठोर सब पूरि ॥१०४॥
कै उर में ह्वै माधुरी माल कठ लपटांउ।
कै अञ्जन ह्वै दोहुनि के नैनन मांझ समांउ ॥१०५॥
कठिन मनोरथ मन उठे, को पूरनि करे आनि।
कृपा करेंगी लाड़िली, दीन दुखी मोहि जानि ॥१०६॥
सुधि आवे वा समय की, बुधि औरें ह्वै जाय।
विह्वल विकल पुकारि कै, परौ धरनि मुरझाय ॥१०७॥
अब तो या तन को तनक और न कछू सुहाय।
जब ते उत्कंठा लता, उठी हिये में आय ॥१०८॥
तब हम तो कछु भले है हुतो भजन से हेत।
अब गति औरे होत है नैक नाम मुख लेत ॥१०९॥

श्याम नाम जो श्रवण में, परै कहूँ ते आय।
तौ लोइन वा रूप को अधिक उठे अकुलाय ॥११०॥
संयम सुमिरन सब मिटे, उलटी सबै सुहाय।
एक लालसा मिलन की, रही अकेली आय ॥१११॥
और कहाँ ते सुमरिये, लीला रास विलास।
रा अक्षर के कहत ही, होत कम्प अरु स्वास ॥११२॥
नैन सजल बानी सिथिल, उठे रोंम अकुलाय।
आपुन ही को आपुनौं, तन बैरी ह्वै जाय ॥११३॥
कब आवोगे धाय कै, अति विह्वल मोहि जान।
दुरि पाछे लोचन दोउ, कर मूदहुगे आन ॥११४॥
तब अपने हों हिये में, करों अनेक विचारि।
कै सुपनो पायो सरस देखों दृगन उघारि ॥११५॥
कै देखत हों ध्यान में, दोऊ मुख सुकुमारि।
कै मन में संभ्रम कछू, ऊठत वारहिं बारि ॥११६॥
कै काहू की कृपाते, कबहुँ सांच है जाय।
तौ लों भुज भरि भामते, लैहों वेगि उठाय ॥११७॥
तब आंचर सों प्राण पति, कर पोंछोगे नैन।
मधुर मधुर हसि कहेंगे, प्रेम लपेटे वैन ॥११८॥
अहो माधुरी हम विना, जो बीतो दुख तोय।
सो दुख तेरो हिये में, छिन छिन साले मोय ॥११९॥
बीती सो बीती सबै, अब जिन करहु सन्देह।
अब निवहैगी दुहुन सों, सदा एक रस नेह ॥१२०॥

अब कबहूँ जिन भूलि कै, मन मति करहु कुरंग।
पलक न अन्तर होहुँगो, सदा खेलि हम संग ॥१२१॥
हो अपने कर कुँवरि को, करो आजु शृंगार।
तू रुचि रुचि कर देहि मो, वन फूलन के हार ॥१२२॥
विविधि भांति के फूल तब, लै आऊँ उठि धाय।
भूषन परम अनूप अति, देउँ बनाय बनाय ॥१२३॥
सीस फूल सोभा मनों, कोटिक जरे जराय।
वरन वरन वेनी मनों, रही त्रिवैनी आय ॥१२४॥
सुवन दारमी सुमन कौ रचि बेंदा दऊँ भाल।
रचों अनूपम हिये को, हेम जुही की माल ॥१२५॥
पदकि रचों उर फूल की, छवि देखत रहों भूल।
फूलन सों ऐसी बनी, मनहुं बनों मखतूल ॥१२६॥
फूलन के अंगद रचौ, पहौंची फूल गुलाल।
नूपुर कंकन झिंझिनी, बाजहिं परम रसाल ॥१२७॥
रीझ कछू मुसकांयगे, करि सुदिष्टि इहि ओर।
माल मरगजी कठ के, दै हैं मोहि अकोर ॥१२८॥
नख सिख करहुँ सिंगार जब, दरस दिखाऊ आनि।
कब देखों वा मुकुर में, मिलि मुख की मुसकानि ॥१२९॥
षटरस नाना भाँति के, धरों निकट सब आनि।
मधुर सलोने चर परे, कछु मन की रुचि जानि ॥१३०॥
अरस परस भोजन करहु, सो सुख कह्यौ न जाय।
नैंनन ही में सखिन कों, देत बुलाय बुलाय ॥१३१॥

विविध भाँति बीरी रुचिर, दैहौं तुम्हैं बनाय।
तब देखौं जब कुँवरि कौं, अपने हाथ खवाय ॥१३२॥
सेज सँवारौं सुखद अति, जहाँ करौ विश्राम।
धरौं सोंज सब समय की, नव निकुंज सुखधाम ॥१३३॥
तुम पौढ़ौगे प्रिया प्रिय, नव प्रजंक परिजाय।
ललित भाँति नव लगनिसों, लगौं पलोटनि पाय ॥१३४॥
अरसि परसि मिलि करहुगे, कछुक हास परिहास।
समझि समझि मुसकाउगे, दोउ भेद के गाँस ॥१३५॥
तब कछु लोचन लोल अति, कछु सलज्ज कछु वाम।
कछु कजरारे ढरि रहे, पिय के सदा सकाम ॥१३६॥
कछुक उगमगे रगमगे, देत सगबगे सैंन।
चपल खरे रस अनुसरे, भरे मनोरथ मैंन ॥१३७॥
कब देखौं यह भाँति सों, जुडे नैंन सों नैंन।
अरस परस मुसकाति मन, समझ गूढ़ कछु सैन ॥१३८॥
कब इन कानन परहिंगे, प्राणन कों सुख दैंन।
कछु ललचौंहे लाल के, लोभ लपेटे वैन ॥१३९॥
जब प्रीतम रस रङ्ग में, रहे परस्पर छाय।
तब ललिता मोहि सैन दै, लैहैं निकट बुलाय ॥१४०॥
अरस परस भुज कंठ में, निरखहिंगे छवि नैन।
सब सुख मोहि बताय हैं, करकै सैंना वैन ॥१४१॥
नव निकुज के रंध्र में, छिन छिन नवल बिहार।
निरखि माधुरी नैन भरि, भरहिं नैन मत बार ॥१४२॥

सखी विशाखा कहैंगी, कबहु विवस मत होहि।
यहाँ प्रेम बाधक सदा, कहि समुझायो तोहि ॥१४३॥
कै सनमुख सुख देखिये, करत हास परि हास।
कै सेवा सब समय की, कीजै निकट निवास ॥१४४॥
रूपमंजरी आनि के, कर पौंछैगी नैंन।
कछु कानन में कहैंगी, परम मधुर अति बैंन ॥१४५॥
सखी सहेली सबै मिलि, प्रीति करैंगी आनि।
सैंनन में सुख दैंगी, नई सहचरी जानि ॥१४६॥
जब जागैंगे जुगल वर, लैहैं निकट बुलाय।
अहो माधुरी मोद सों, कछुक मधुर सुर गाय ॥१४७॥
भेद रागिनी राग के, उपजहिंगे बहु भाँति।
तान गान सुनि प्राण पति, रीझि रीझि मुसकाति ॥१४८॥
दसन खंडित बीरी रुचिर, दैहैं निकट बुलाय।
कुंवरि आपने कंठ को, हार कंठ पहराय ॥१४९॥
तब सैंनन में कहैंगे, कछु विनोद रस गाय।
मन भाये पहौंचे निकट, दिन होरी के आय ॥१५०॥
भाँति भाँति परिहास रस, कहिहों कछुक बनाय।
किलकि किलकि हसि जाँयगे, दोउ कंठ लपटाय ॥१५१॥
तब होरी की सोंज सब, राखों सकल संवारि।
घोरि अरगजा घटनि में, केसर सरस सुधारि ॥१५२॥
रचि गुलाल बहु भाँति को, सोधों सरस बनाय।
चन्दन चारु कपूर सों, भाजन विविधि भराय ॥१५३॥

करि अबीर बहु रंग को, नव गुलाल को नीर।
चलि खेलहु पिय प्राणपति, कालिंदी के तीर ॥१५४॥
हुलसि उठे हिय लाडिले, दिन होरी के जान।
अपने अपने मेल को, सबै मतौ मन ठान ॥१५५॥
वृन्दादिक सब सामरी, भई श्याम की ओर।
ललित विशाखा माधुरी, बनी कुंवरि की जोरि ॥१५६॥
एक ओर नव नागरी, लिए सहेली संग।
ढप दुँदभि और झालरी, बाजत भेरि मृदङ्ग ॥१५७॥
उतहिं कुंवरि संग किन्नरी, रूरज मुरज निसान।
हो हो होरी विनु कछू, और परहिं नहि कान ॥१५८॥
फेंटन भरे गुलाल की सोधों सरस मिलाय।
दुरि भाजत हैं प्राण पति प्रिया बदन लपटाय ॥१५९॥
घोरि अरगजा घटनि में राखे सवन दुराय।
दुरि पाछे ह्वै श्याम के दई शीश ते नाय ॥१६०॥
एक सखी तब बीच करि, ढिग ठारी भइ आन।
पिचकारी रस पूरि कै, दई नैंन में तान ॥१६१॥
भरि भरि झोरि अबीर के, दीने सवनि उड़ाय।
अँधियारो करि श्याम को, लैगई कहूँ दुराय ॥१६२॥
बहुत दिनन में सवन के, भऐ मनोरथ आज।
नीकी भाँति बनाय के, करौ जुवति को साज ॥१६३॥
नख सिख अंग सिंगार करि, चली प्रिया पै धाय।
आज नई तक सहचरी, चाहति देखौ पाय ॥१६४॥

सब सखियन कर गह लिए, ढिँग बैठारी आय।
तन पुलकित भो प्रेम सों, परस प्रिया के पाय ॥१६५॥
पहचानी हम सखी यह, परसत ही कर आय।
जो भाजी दुरि सबन के, मुख सोंधों लपटाय ॥१६६॥
बहुरो वाही रूप सों, मिलि झुलि ओंगो डोल।
सबै सहेली सहचरी, गावहिं राग हिंडोल ॥१६७॥
एक अरगजा घोरि कै, छिरकत हैं तेहि गात।
इक गुलाल लपटाय मुख, देखत ही दुरि जात ॥१६८॥
इक पिचकारी कनक की, नव केशर सों घोरि।
पिय प्यारी कों निरखि कें, चितै हँसति मुख मोरि ॥१६९॥
इहि विधि हिल मिलि खेलिऐ, फागु बड़ो त्यौहार।
बहुरयो मधु ऋतु जानि के, विहरहिं विपिन विहार ॥१७०॥
तब वृन्दा द्रुम वेलिको, दीनों परम निदेश।
नख सिख करहु सिंगार सब, पहिरहु नूतन वेश ॥१७१॥
हेम जुही हरषहु हिये, हरि आवत तब हेतु।
प्रिय लागति हौ पीय कों, प्रिया बदन सुख देत ॥१७२॥
हो तमाल मालाबली, करहु मोद विस्तार।
सुख पावत हैं स्वामिनी, देखि श्याम उनहार ॥१७३॥
हो मल्ली हो मालती, हो चम्पक हो चारु।
नख सिख तें आनन्द सों, फूलहु सब फुलवार ॥१७४॥
यही मनोरथ मन कियो, सबै सुमन निरवार।
आजु कुंवरि मिलि करहिगे, अपने करन सिंगार ॥१७५॥

फूल रही कुसुमावली, छबि वरनी नहिं जात।
सबहि सरस सुख देति हैं, अपनी अपनी भाँति ॥१७६॥
अरसि परसि भुज अंस धरि, निरखत सुख चहुँ ओर।
चित वत ही आगें चलें, नाचत मोर चकोर ॥१७७॥
जहाँ कुंद देखति कुँवरि, निरखति तहाँ निहारि।
ताही तें भावत अधिक, प्रिया दशन अनुसारि ॥१७८॥
नील कमल निरखे कहूँ, तन पुलकित तेहि काल।
अपने कर सों कुंवरि लै, करी कंठ की माल ॥१७९॥
पीत कमल लालन कहूँ, लख्यो ललित कर धाय।
बार बार चूमत तिनहिं, प्रियहि दिखाय दिखाय ॥१८०॥
मंद मंद गति चलति हैं, फेरि रही तन काँति।
नवल माधुरी कुसुम के, दलन बिछावत जात ॥१८१॥
नवल माधुरी पंथ की, रचना रची बनाय।
नवल माधुरी कुंज में, मिले कुँवरि दोउ आय ॥१८२॥
नवल माधुरी करनि सों, नवल करत शृंगार।
नवल माधुरी फूल सों, देत सँवारि सँवारि ॥१८३॥
नवल माधुरी दलन सों, बाँधे कबरी केस।
नवल माधुरी बीन के, बैनी रची सुदेस ॥१८४॥
नवल माधुरी कुसुम के, करन करे अवतंस।
नवल माधुरी माल के, लटकत फोंदा अंस ॥१८५॥
नवल माधुरी सेज पर, नेंक करौ विश्राम।
नवल माधुरी प्रेम सों, पवन करत अभिराम ॥१८६॥

नैंनन सों नैंना मिले, मुख सों मुख लपटाय।
भुज अरुझे सुरझे नहीं, रहे सुरति सुरझाय ॥१८७॥
उरसों उर ऐसे मिले, सब अगन सों अंग।
मनहुँ अरगजा में कियौ, नव केशर को रंग ॥१८८॥
अरस परस बतरात मिलि, कछुक अटपटी बात।
नैंन बैंन तन मन सुनत, सबै श्रवन ह्वै जात ॥१८९॥
जब निरखत मुख माधुरी, लोचन रहत लुभाय।
श्रवन पान तन मन सबै, नैननि में रहि आय ॥१९०॥
जब बोलत तब बचन कों श्रवन अतिहि ललचात।
जब चाहत चख चाह को, बैंन खरे अकुलात ॥१९१॥
जब सैनन मुसकात दुहु, चितै माधुरी ओर।
देखत सब सुख पूरि कै, कृपा कटाच्छन कोर ॥१९२॥
ता छिन की शोभा कछू, कहत बनैं नहिं बैंन।
कै सुख समुझै माधुरी, कै माधुरि के नैंन ॥१९३॥
समय जानि कै सहचरी, रही निकट सब आय।
अपनी अपनी सोंज सब, लीनी करन बनाय ॥१९४॥
सीतल सुखद सुवास इक, करवावति जल पान।
एक सखी तब दुहुन को, दरस दिखायो आन ॥१९५॥
एक कुसुम बहु भाँति के, लाई सरस सँवारि।
एक माधुरी दुहुन की, नैनन रही निहारि ॥१९६॥
एकनि चित्र विचित्र अति, रचे अनूपम भाँति।
चितै चितै नागरि कुँवरि, नैननि में मुसकाति ॥१९७॥

एक बजावत किन्नरी, इक नाचत संगीत।
इक गावत अनुराग सों, दुलरावत दोउ मीत ॥१९८॥
एक निकर सारस बनें, एक गौर इक श्याम।
सदा एक रस रसन सों, रटत पिया पिय नाम ॥१९९॥
इक भोजन बहु भाँति के लाई रुचिर बनाय।
देत माधुरी दुहुन को, नव नव रुचि उपजाय ॥२००॥
जुर मंडल बैठीं निकट, सबै सहेली सग।
बीच बीच परिहास के, उपजत कोटि तरंग ॥२०१॥
पान करत रस माधुरी, पियत न कोउ अघात।
ता पाछे अचवन कियौ, जल सुगन्धि बहु भाँति ॥२०२॥
रुचि बीरी करि कुँवरि के, देत सँवारि सँवारि।
कर काँपत है कुँवरि के, मुख माधुरी निहारि ॥२०३॥
तब उनको मन जान कै, हों अपने कर देत।
वे सहचरि सुख समझि कें अरसि परसि मुख लेत ॥२०४॥
इहि विधि विलसि बसंत ऋतु, सकल सुखन की रास।
नवल माधुरी कुंज में, कीने विविध बिलास ॥२०५॥
लाग्यौ पवन सुहावनौ भ्रमकन उठे सुदेश।
गिरिवन पुलिन निकुंज गृह, ग्रीषम कियौ प्रवेश ॥२०६॥

❀ इति श्री उत्कण्ठा माधुरी समाप्ता ❀

———

अथ श्री बंशीवट माधुरी

दो०—चारु चरण चैतन्यचन्द्र मनवच कर ध्याँऊ।
सदा सनातन रूप वास वृन्दावन पाऊँ ॥ १ ॥
दिन प्रति रास विलास केलि नैनन भर देखों।
करत हास परिहास कुँवर अंतर गति लेखों ॥ २ ॥
बंशीवट तट निकट भूमि शोभित हरियारी।
निशिवासर इक संग सदा विहरहिं पिय-प्यारी ॥ ३ ॥
कालिंदी के कूल कमल फूले बहु भाँतिनि।
अरुण पीत सित असित कोउ शोभित सतपातिनि ॥ ४ ॥
विमल कल्प-तरु छाँह निकट शोभा अधिकाई।
रचि पचि मन रमि रह्यो नेक कहुँ अनत न जाई ॥ ५ ॥
मनु ऋतु आगम जानि विपिन मिलि विहरत दोऊ।
एक वैश गुण रूप एक-सम घटित न कोऊ ॥ ६ ॥
ललितादिक सब सखी सहेली परम सुहाई।
नवल माधुरी संग सदा सहचरि सुखदाई ॥ ७ ॥
अति आरत सों अरस परस अंसन भुज दीयें।
डग मगात डग भरत रूप माधुरि रस पीयें ॥ ८ ॥
जित देखौं तित छवि प्रकाश सों छाय रह्यो वन।
जनु अवनी पर चरण धरत डोलत दामिन घन ॥ ९ ॥
फूलि रहीं नव लता देखि लागत मन लोभा।
थकित रहे हैं नैन देखि वृन्दावन शोभा ॥ १० ॥

बन शोभा बहु भाँति सकल तन में प्रतिबिम्बित।
बन में तन ह्वै रह्यौ सुतन बन को अवलम्बित ॥ ११ ॥

क०—पल्लव प्रसून पत्र सरस सलोल लता, नखसिख शोभा सब अंगन में झलकै। दिन-कर हूँते द्युति दिपति अधिक देखि, दम्पति की देह सत द्रुमनि में दलकै। माधुरी की धारा रोम-रोमते उमंगि चली अरस परस छवि दुहुन की छलकै। प्यारी जी की काँति न समाति कहूँ कानन में, मानों दीप-मालिका-सी दोलें डिंग जल कै ॥ १२ ॥

दो०—बन शोभा जो देखिये, सब तन कियो प्रकाश।
तन शोभा जो देखिये, बन को सकल निवास ॥ १३ ॥

चौ०—बन में तन तनमें वृन्दावन। ज्यों घन दामिनि दामिनि में घन ॥
अहो प्रीय या बन की बात। कहत कछू मुख कही न जात ॥
कब हुँक दोऊ विपुल ह्वै जाँय। विपुल दीठह्वै नैन समाँय ॥
बन की शोभा कहत न आवै। कोट भाँति निज-रूप दिखावै।
छिनछिन नौतन विपिन विलास। अरुणपीत सित असित प्रकाश ॥
फूले नवल निकुंज निहार। कोटि भाँति के किये शृङ्गार ॥

रो०—अरुण रंग की लता ललित फूली बहु भाँतिन।
अरुण फूल फल अरुण अरुण पल्लव नव पाँतिन ॥ २० ॥
सरस-भूमि अति अरुण अरुण सारस सुठि शोभित।
अरुण दलन की सेज देखि मनको मन लोभित ॥ २१ ॥
उमड्यौ विपुल अनुराग जनु, उपमा को नाहिन अरुण।
प्रात समय प्राची-दिशासों जनु गिरिसैं निकस्यों तरुण ॥ २२ ॥

क०—पीत फूल पीत फल पीत ही परम दल पीत कुञ्ज प्यारी मोहि प्राण हुते प्यारी है। परम रुचिर पीत पल्लव प्रगट भये पंकज पराग पूरि धरणी सुधारी है। पीत ही पंकज पीत पुहुप सुवास रच्यौ परम प्रवीन केलि माधुरी सिंगारी है। पीत रंग पंछी प्रघटित पीत भाषा मुख हिलि मिलि गावें गुण कीरति तिहारी है॥ २३॥

क०—फूलन के भार फूल रहीं सब डार अब देखिये निहारि छवि लता हरियारी की। हरे हरे पात सब रससों चुचात देखि दृगन अघात दुति हरी फुलवारी की। तैसेई हरित शुक सारस सरस अति गावत सुजस केलि कीरति तिहारी की। हरित निकुञ्ज रस माधुरी को पुञ्ज अति ताहीते परम ऐसी प्रीति है सुप्यारी की॥ २४॥

क०—अलिन के पुंज जाते चलि न सकत नैक नील कुञ्ज नलिन की नीके कै निहारिये। कोकिला के कूल कल कूंजित ललित गति जाकी उपमा को कोटि घटा घन वारिये। नील-मणि भूमि नील दलन की सज्जा रची नैन भरि देखौ नैक आगे पाँव धारिये। नील कुसुमन के कटाव कौन भाँति रचे याकी नैक मन देकें माधुरी विचारिये॥ २५॥

क०—कुञ्ज कुञ्ज केवरा कमोद कुंद जाही जुही उज्वल निकुञ्ज आज सरस सवारी है। बकुल चमेली मल्लि माधुरी मृदुलु शुचि सेवत सुगन्ध सुठि सरस निवारी है। फूलन की रचना रुचिर कौन भाँति रची कर अभिसारी जनु नायिका

सिंगारी है। जग मगि रही तैसो जौन्ह उजियारी जैसी गौरे तन सोंहैं मानों तनु सुख सारी है॥ २६॥

दो०—शोभा नवल निकुंज की, कहत बनै नहि बैन।
कै जाने मन की दशा, कै माधुरि के नैन॥ २७॥

चौ०—एक कुंज केसरिरँग रंगी। एक श्याम सोसनी सुरंगी॥२८॥
एक बैगनी इक जंगाली। एक रंग नवरंग गुलाली॥ २९॥
एक कर्बुरित एक कषायक। कनक वरण सब के सुख दायक॥३०
एक लता शोभित सरसानी। एक तमाल कंठ लपटानी॥ ३१॥
तरुवर रहें भूमि अवनीसों। फूले फले भाँति कवनीसों॥ ३२॥

दो०—कुसुम कुसुम पर मोदहित, मधुपन किये निवास।
तव दरशन हित वन रचे, कोटिक नैन प्रकाश॥ ३३॥
निकसी सरस सलोल अति, लता लहलही डार।
मिलवे को धावत मनौ, आवत भुजा पसार॥ ३४॥
तरुवर मधुधारा श्रवें, चहुँ दिशि चंचल पात।
सदा प्रेम भीने रहें, कम्पित पुलकित गात॥ ३५॥
कूजत सारस सरस अति, ह्वै ह्वै जात विदेह
प्रगटित तव नामावली, भीजे सरस सनेह॥ ३६॥
मोर मुदित नाचत महा, करत कोकिला गान।
अपने अपने गुन सबं, तुम्हैं निवेदति आन॥ ३७॥

क०—निस दिन एक रस रहत मुदित अति बड़े गृह पति देखी द्रुम वृन्दावन के। साधुन के सेवे सदा सौरभ सुमन लिए आवत मधुप लेले लोभी मधुकन के। फूली है अधिक

सुख देखि अहो लता वधू रहति है संग लपटाये पियतन के।
कौन प्रेम कौन रस अरस परस मिलि कहत हैं अपने मनो
रथ तो मन के॥ ३८॥

दो०—देखहु प्रिया निहार कै, कालिन्दी की ओर।
फूल रही कमलावली, मनहु भयो अब भोर॥ ३९॥
हंससुता हरषित भई निरखति रूप तिहार।
अरबिंदन की आरती, देत बदन परवार॥ ४०॥
आज मनोरथ कीजिये, मन के मदन हुलास।
सँग सब मिलि मिलि सहचरी विहरहिं वारि बिलास॥४१॥

चौ०—धाय धाय सब जल में आईं। अपने अपने जूथ बनाईं॥४२॥
अरस परस छिरकत हैं दोऊ। एक वैस गुणघटित न कोऊ॥४३॥
सन्मुख सूर सबै मिलि खेलत। जलधारा कर सों भरि पेलत॥
भरि अंजुलि नैन न में ढारत। कबहुक नैन कमल भरि मारत॥
नख सिख भीज रहे सब गात। उमड़े आनंद उर न समात॥
भीजे बसन अंग लिपटाने। अति सूक्ष्म तन जात न जाने॥
मनमोहन कीनी कछु घात। छिरक छीट जल में दुरि जात॥
हेरि हेरि जल में दुरि आईं। गहत प्रिया के उर लपटाईं॥
अरस परस रस सोंझक झोरत। हार चीर कंचुकि बंद तोरत॥
तब ललिता कछु जनत बनायों। सब सखियन कों भेद बतायों॥
डूबक लै उछरी कहुँ जाई। गहे धाय मनमोहन आई॥ ५२॥
मध्य कुँवरि राखे कर ठाड़े। चहूँ ओर छिरकत जल गाड़े॥
मनमोहन इकले कर पाई। करति सबें अपने मन भाई॥५४॥

एकनि कर गाढ़े करि गहे। एकनि बचन भामते कहे ॥ ५५ ॥
एकनि आन भरी अंक बारी। इक कानन भाजत दै गारी ॥५६॥
एक अंचर पोंछत मुख आई। एक कपोल चूमि दुरि जाई ॥
अपुनौ बल कीनौ बलवीर। निकसो गज मनु तोरि जंजीर ॥
वारन मनहुँ वारुणी पीयै। विहरत वरतरुणी संग लिये ॥
जल में छल नाना विधि खेलत। कबहुँक धाँय कंठ भुज मेलत ॥
नव नव खेल नवल मिलि खेलत। छिन छिन रस सागर सुख झेलत ॥
प्रिय तन दीठ कुटिल सब चाहत। नैन सैन दोऊ ओर उमाहत ॥
जल तरंग डोलत अब गाहत। लोक बेद मरजादा ढाहत ॥
दो०—जल विहार के जतन जे, जानति कुँवरि अनेक ॥
टारे टरत न नैन कहूँ, अपनी अपनी टेक ॥ ६४ ॥
चौ०—रूपे सूर सन्मुख दोऊ ओर। इतहि कुँवरि उत नवल किशोर ॥
जुरी जुवति अपने सब जोर। भर लीनी कमलन को झोर ॥
एक लिए कर कमल ढुलावति। इक ठाड़ी सैनन डर पावति ॥
एक अचानक घात चलावति। एक बीच करि अनी बचावति ॥
वढयो खेल कमलन को भारी। सैनन में सिखवत सुकुमारी ॥
धावति जुवति देय किलकारी। तब जल में दुरि जात विहारी ॥
कमल समूह लिए फिर आवत। हरे हरे काँहू न जनावति ॥
लालन दीठन बाण चलावति। ललना अंचल ओट बचावति ॥
जल में कमल जहाँलों पाये। ते नव लाल सु तोर मँगाए ॥७३॥
मोहन मिलकर निकट बुलाई। भरि भरि झोर शीशते नाई ॥
इक नाचत दै दै कर तारी। एक हंसति ऊची किलकारी ॥७५॥

आई निकट देखि सुकुमारी। दीठ ओट ह्वै गये बिहारी ॥७७॥
तब ललिन कमलन बहु लाए। प्यारी के सम्मुख उठि धाये॥
देखी कुँवरि निकट जब आये। ललिता करते आन छुडाये॥
अरबराय जल में फिर हेरत। इत उत चँहू ओर कर फेरत॥
खोजत कमल कँहूँ नहि पावत। दीख परें पर हाथ न आवत॥
दो०—झलमलात जल में बिमल मुख कमलन की काँति।
उमगि उमगि चाहत मिलो, कर परस्यो नहि जात॥ ८१॥
चौ०-नैनकमल कमलनसों खेलत। करि कमलन सों हरि भरि पेलत॥
उरज कमल सों उर लपटानो। बदन कमल में बदन समानो॥
दो०—मदन खेल के खेल में, तनमय भै सुकुमार।
झलकत झलमल बदन पर, जनु वारिज परिवार॥ ८४॥
चौ०-अतिरस भीज रहे पिय प्यारी। सिथिल भई तन अति सकुमारी॥
जल में एक महल तब देख्यो। शोभा सरस सुमेर विशेख्यो॥
अद्भुत रूप अनूप निहारो। कालिंदी निज करन संभारो॥८७॥
आवें संग सहचरी लीये। प्यारी के अंसनि भुज दीये॥ ८८॥
महल पौरि में कियो प्रवेश। रीझ रहे छवि देख सुदेश॥८९॥
जल में थल थल में जल जाने। समझि भेद मनमें मुसकाने॥
बन्दन माल द्वार पै सोहै। देखत ही सब को मन मोहै॥९१॥
मंगल कलश पूरि तहाँ धरे। कदलि खंभ ठाड़े तहाँ करे॥९२॥
मधुकर मंगल गीत उचारें। सारस सुजस रहत हैं द्वारें॥
चहुँदिश फूल रही फुल बारी। चंपक बकुल गुलाब निवारी॥
कमल दलन सों धरणि शृंगारी। डरपत चरण धरत पिय प्यारी॥

केसर के सरवर कहुँ भरे। जल सुगंधि सों पूरन करे ॥ ९६ ॥
कहुँ कहुँ कंचन के नल उछरे। मंद मंद झरना कहुँ झरे ॥९७॥
एक महल दरपन को सोहै। उपमाको कोटिक रवि कोहै ॥
एक ठौर फूलन के न्यारे। मणिमय मंजुल खंभ सँभारे ॥९९॥
कहूँ बिछौना सरस बिछाये। खेलन को सब खेल बनाये ॥
चौपर और शतरंज अनूप। और विविधि भाँतन के जूप ॥
एक महल कीने चित्र सारी। ब्रज की लीला सब विस्तारी ॥
एक महल सौरभ के रचे। सोधों सरस सुगंधनि सचे ॥
एक महल फूलन के फूलें। मत्त भये मधुकर रस भूलें ॥१०४॥
कहूँ सहेली बसन सवारें। कहुँ कपूर चन्दन मिलि गारें ॥१०५॥
कहूँ माल फूलन की रचें। कहुँ मणिमय कंचन की खचें ॥

दो०—अहो प्रिये या महल की, शोभा कही न जात।
कौन कौन रचना रची, देखत दृग न अघात ॥१०७॥

चौ०—तब शृंगार महल में आये। भूषन बहुत भाँति पहराये ॥
अपनी अपनी रुचि जो भाये। तहाँ बैठ शृंगार बनाये ॥

क०—अरस परस दोऊ करत शृंगार मिलि, लालजू के लाल पाग ललित बनाई हैं। प्यारी जूकी सारी सकुंवारी तन सुख सोहै, कचुकी अरुण उर केसी छवि छाई है। लोचन चपल अति कानन करन फूल फूले तन फूलन की माला बनि आई है। जग मगि रहे अंग भूषन अनूप अति भूषन को भूषन तौ रूप की निकाई हैं ॥ ११० ॥

क०—करत शृङ्गार कछु कौतुक उठत अति मन समुझत

सुख कहत न आवहीं। फिरि फिरि पोंछत दृग् अंजन अधिक दे दे बेसर उतारि बार बार पहरावही। करत कपोलन में चित्र नाना भाँतिन के मृगमद लेख लिखि लिखि के मिटावही। मोहन के मन में मनोरथ उठत जो जो समुझि समुझि प्यारी मन मुसकावही॥ १११॥

क०—सहज सुदेश अति सुन्दर सुठौने अंग, बार बार तिनको शृङ्गार कहा कीजिये। आनन में लोचन चपल अनियारे कारे तिनहूँते कानन कमल कहा दीजिये। मुसकानि मोतिन की माला उर शोभा देत अंगन को कहा अंगराग हाथ लीजिये। सोहै कै कहत सुख याते न सरस कोऊ, सनमुख बैठि मुख देखि देखि जीजिये॥ ११२॥

स०—बैठे हैं फूल भरे रस फूल सों फूल निकुञ्ज में कुञ्ज बिहारी।
फूल के रंग भरे अंग में सब अंगनि फूल रही फुलवारी॥
फूल के भूषन फूल रहे तन, फूल मई वृषभानुदुलारी।
फूल को भार सवांरि सकें नहीं फूलहुते अति ही सुकुमारी॥

दो०—करि बैठे सिंगार नव सन्मुख सबहि संवारि।
कालिंदी तिहि समय के, लाई सब उपहार॥ ११४॥
षट रस नाना भाँति के, दीने सरस संभारि।
परुसत अपने हाथ सों, मणि मय मंजुल थार॥ ११५॥

सो०—मधुर सलोनी भाँति, निपट संवारे चरपरे।
कटुक न जाने जात, फीके ऊनी के किये॥ ११६॥

क०—मंजुल सहित आन मंडल में बैठे आन, मणिन के

थारन को मंडल बनायो है। सखिन समाज सनमुख सब शोभा देखि मानो कमलिनी को विपिन सों लगायो है। नये नये भोजन करत नाना भाँतिन के नई रुचि जाकी कछु जैसो मन भायो है। बोलि बोलि देत दोऊ अपनी सहेलिन को ऐसी माधुरी सों कोऊ क्यों हूँ न अघायो है॥ ११७॥

क०—भोजन की भाँतिन को कांति न कही परति, पांति पांति राखे पनवारे तो परसि कै। मंजुल मधुर मृदु मादिक सलौने लौने स्वादिक अधिक रस रहे हैं सरस कें। अरस परस मिलि जैंवत रसिक वर सब रस रह्यो वृन्दाविपिन वरसिकै। कोर के उठावत पै करन करत कह्यो विवस ह्वै जाति मुख माधुरी दरसि कै॥ ११८॥

क०—भोजन करत नाना भेद उपजात कछु छिन-छिन नई नई घातन मिला वहीं। जब हीं सँभारि मुख देत हैं मधुर कौर कर तेहि ठौर ते न नैकहू उठावहीं। कबहुँ कछुक दूरि अदल बदल लेत दम्पति सुजीकी बात काहू न जनावहीं। लालची लड़ैतीजू पै लेत न अघात क्यों हूँ लालन में लाल बार बार ललचावहीं॥ ११९॥

स०—भोजन जोजन के करिये बलि जो जन लोज सुवास बसै हों। मेंनके मोदक मादक हैं अति स्वादिक अधिक केलि रसैहों। सजनीजु खवावति भेदनिसों कछु हास विलास हिये में हसै हों। मोहन के मुख लों करिकें डहकाय प्रिया मुख देत गसै हों॥१२०॥

स०—प्राननते अपने प्रिय को पिय भोजन अपने हाथ करावें।
रचक सों कर कौर लिए पर पंच महा मन में उपजावें।
धरे कर डार डरे मन में जू प्रिया अपने जिय न जनावें।
नें कसु जो हंसि देत हसीली कहूँ फिर हाथ नहीं मन आवे॥
कछु मादिक स्वादिक चोजन के नव भोजन भामिन भाइन में।
कछु भेद सों माधुरी पान करें कछु खात खवावत चायन में।
कछु शेष सखीन को देत दोऊ झुकि झाँकि झरोखनि झांइन में।
तब देखि प्रिये प्रिया की छविकों अति रीझ परे पिय पांइन में॥

क०—भोजन को बैठे दोऊ नवल निकुञ्ज आनि अचवन सरस सुगन्ध जल कीनों हैं। चन्दन कपूर चारु सौरभ सों सानों अति हाथ पोंछवेकों हाथ सारो हाथ लीनों है। बानिक बनाय बीरी बीरा सहचरी लाई, अरस परस पिय प्यारी मुख दीनों है। दसननि खण्डित कराय आधी आप लेत योही रस प्यारो लाल रहत अधीनो है॥ १२३॥

क०—बीरा खवावत विनोद उपजावत कछु छिन-छिन नई नई घातनि मिलावहीं। पीक काहू छल सो कपोलन लगाय जात परस के लीने लै लै दरस दिखावही। हाथ ही सों पोंछे मनु हाथ लिऐ प्यारी जू को, हाथ अपने मन कहू हाथ फिर आवहीं। हेरि हेरि गति मन मोहन की ऐसी भाँति हिये में हँसीली लखि हरि मुसिकावहीं॥ १२४॥

दो०—खेलत विविधि विलास रस, करत हास परिहास।
रस सागर विहरहिं सदा, मिटै न मन की प्यास॥१२५॥

चौ०—उमड्यो तहाँ प्रेम को पुंज। सब रस वरिषत नवल निकुंज॥
कोमल अमल सेज सुख धाम। नेक तहाँ कीनों विश्राम॥
दो०—समय जानि तब सहचरी, निकसी सहज सुभाय।
परम मधुर सौं माधुरी, लगी पलोटन पाँय॥१२८॥
चौ०-कबहुँक रसबातन बतरावहि। कबहुँक अरस परसहंसि जावहि
कबहुँक सैननमें मुसकाही। कबहु विवस है उर लपटाही॥
अति रस मत्त भए सुख दाई। सहचरि औसर को तब आई॥
निकसत काहू नैक न जानी। आय सबै रंध्रनि लपटानी॥
निरखत सुख मन करत विचार। पिय प्यारी को नवल विहार॥
उपमा मन अनेक उपजावें। समिता कों कोऊ नहि पावे॥१३३॥
किधों तमाल लता लपटानी। कै घन में दामिनि थहरानी॥
किधों शैल पर सुरसरि लसी। कंचन मनहुँ कसौटी कसी॥
जनु फूली चंपक की वेली। मधुकर मत्त करत तहाँ केली॥
सोभित प्रिया पीय के अंक। मेघ अंक में मनहुँ मयंक॥१३८॥
इन्द्र नीलमणि परम रसाल। खची मृदुल कंचन की जाल॥
अंग अरगजा की जनु कीच। कुंकुम घोरिकियो ता बीच॥
किधों हंस सारस की जोरी। बाँधे दोऊ प्रेम की डोरी॥१४१॥
सरिता मनहुँ सिंधु में सोहै। उपमा की उपमा अब कोहै॥
दो०—उपमा दई अनेक सखि, लागी नहि कोऊ एक।
पिय प्यारी सों प्रिय पिया, यही गही जिय टेक॥१४३॥
चौ०—जोलौं मन उपमा को दीजै। तोलों रूप देखिबो कीजै॥
श्यामा श्याम सेज सुख सोए। अंगन में सब अंग समोए॥

मुख सों मुख सुखसों लपटाने। नैननि में दोऊ नैन समाने॥
उरसों उर भुजसों भुज जोरें। प्रेम बंध छूटक नहीं छोरें॥
दो०—सुरझाये सुरझे नहीं, उरझ रहे यह रूप।
अरस परसि ऐसे मिले, द्वै भे एक सरूप॥१४८॥
चौ०—समय जानि सहचरी जगावति। एक मधुर रस बेंन बजावति।
गावति एक मनोहर गीत। दुलरावति मन मोहन मीत॥१५०॥
सोये सुनत माधुरी गान। रागरंग में परम सुजान॥१५१॥
उठ बैठे दोऊ रस भीने। अरस परस अंसन भुज दीने॥१५२॥
कोऊ तान मन में गढ़ि गई। सहचरि निकट बोल तब लई॥
जो जो सुर अपने मन भावे। सहचरि सोही फिर फिर गावें॥
रीझि माल मोहन हँसि दीन्हीं। तब प्यारी बीरी कर लीनी॥
सैन बोलि मुख में हंसि दई। माधुरी देखि विवस ह्वै गई॥
आनंद बारि नैन भरि आये। श्रम जल कछुक बदन पै छाये॥
अंचल सों पोंछत पिय प्यारी। सावधान करि ढिंग बैठारी॥
नौतन आय सिंगार बनाये। अपने बसन ताहि पहराये॥१५६॥
भाल बिसाल तिलक रचि कीनों। माथे मृग-मद बेंदा दीनों॥
बेसरि नाक बनाय संभारी। दई रीझि कै लाल बिहारी॥१६१॥
फूलनि को शृङ्गार बनायो। सोधों सोधि सुगन्धि मिलायो॥
जो भूषन निज आप उतारे। सो सहचरि के अंग सिंगारे॥१६३॥
अपने कर सों अंजन दीनों। मन भायो माधुरि को कीन्हों॥
चहुँ दिशि ते सहचरि सब आईं। अपनी सौंज लिऐ कर धाईं॥
जागे नवल कुँवर जब जाने। तब उपहार सबै उर आने॥१६६॥

इक सुगन्धि जल पान करावत । वीरी एक बनाय खवावत ॥
एक सखी दर्पन दिखरावत । एक चौर चहुँ ओर ढुरावति ॥१६८॥
झाँके उझकि झरोखन आई । निरखत मुख नैनन न अघाई ॥
ठाड़ी सब दर्शन की आस । मिटै नहीं श्री मुख की प्यास ॥१७०॥
देखत मुख सब के दुख गये । संभ्रमसों सब के मन भये ॥१७१॥
चकई चाहि तीर उठ आई । फिर चकवाने निकट बुलाई ॥१७२॥
नाचत मोर मुदित मन भऐ । घन दामिन उनऐ जनु नऐ ॥१७३॥
भये चकोरन मन आनन्द । जनु प्रगटे पूरन द्वै चन्द ॥१७४॥
धाये मधुप कमल जुग जाने । कमलिन कमल बंधु कर माने ॥
इन्दीवर अंबुज की पाती । फूली सब कमलन की जाती ॥१७६॥
कमल नैंन छवि कमल निहारत । इत उत दृष्टि नेंक नहिं टारत ॥
अहो प्रिये कमलन की कांति । देखत शोभा दृग न अघात ॥१७८॥

दो०—सर्व सहेली सहचरी, लीने सबै समाज ।
कमलन को सुख देखिये, बैठिन बारे आज ॥ १७९ ॥

चौ०—कालिंदी मन को तब जानी । नौका नवल साज कर आनी ॥
कीनो पिय प्यारी को भायौ । नव नव भाँति नवारे छायौ ॥
मुक्तन के तहाँ तने बितान । प्रगट भये कोटिक मनु भान ॥
मणिमय मंजुल खंभ सँभारे । हीरालाल पिरोजा पारे ॥१८३॥
ठौर ठौर बैठक मणि सो हैं । तापर ध्वजा-पताका मोहैं ॥१८४॥
फूलनि के नव कुञ्ज बनाए । बँगला विविध भाँति के छाये ॥
भाजन विविध पूरि मधु धरे । रागभोग सों पूरन करे ॥१८६॥

दो०—सकल सौंज षट ऋतुन की, राखी सरस सँभारि।
कौन समय केहि खेल कों, कब मन परै विचार॥ १८७॥
बैठे आये कुँवर दोऊ, लिये सहेली संग।
ढप दुँदभि और झालरी बाजत भेरि मृदङ्ग॥ १८८॥
एक ओर सब सहचरी गावत अपनी मोद।
एक ओर सब नागरी, नागर करत विनोद॥ १८९॥
मंद मंद नवका चलै, तिय मन के अनुसार।
कबहुँक मन गति ते अधिक, जात न लागे बार॥ १९०॥
जहाँ जहाँ फूले कमल, रहें तहाँ छवि देखि।
बैनन मुख आवत कह्यो, नैनन लगे निमेषि॥ १९१॥
एक ओर फूले कमल, नील कमल के पात।
काहू रस अटके मधुप, मटक्यौ नैंक न जात॥ १९२॥
पंकज पीत पराग में, रहे प्रेम रस पागि।
मधुपनि के मुख पीत की, रही पीतता लागि॥ १९३॥
एक ओर सब तामरस, कीन्हों सरस प्रकाश।
निकसि चले अलि कोषते, कीयौ जनम निवास॥ १९४॥
सुन्दर सहज सरोज सब, सीतल सुखद सुवास।
मधुप सदा सेवत रहें, बँधे प्रेम के पास॥ १९५॥
एक ओर कुमुदावली, विकसित मुदित सशंक।
तब मुखते संभ्रम भयो, दिनमणि किधों मयंक॥ १९६॥
इन हँसन को हेतु कछु, मिटे न मन ते नेंक।
मिले रहे निशि दिन सदा, यही प्रेम की टेक॥ १९७॥

हंससुता तब हेत हित, तनु कीनों मणि थार।
अरबिंदन की आरती, देति बदन पर बार॥ १९८॥
मन-मोहन मन में कछुक, कीनों नवल विचार।
आजु कुंवरि को कीजिये, कमलन को शृङ्गार॥ १९९॥
तब वृन्दा अरविंद के, लाई वृन्द अनेक।
बरण बरण लीने कछुक, अरुण बरण के एक॥ २००॥
कमल नैंन कर कमल सों, रचना रची अनूप।
शीश फूल सिर कमल को, शांत सिंगार को रूप॥ २०१॥
नील कमल की कर्णिका, कर्ण करी अवतंस।
ललित भाँति नव कमल के, लटकत फोंदा अंश॥ २०२॥
कमल दलन की कंचुकी, रची अनूपम भाँति।
लालन के छल बल निरखि, ललना कछु मुसिकात॥ २०३॥
कमलनि के ककन रचे, पहुँची परम रसाल।
कमलनि के अङ्गद बने, उर कमलनि की माल॥ २०४॥
कमलनि के भूषण जहाँ, तहाँ कनक मणि कांति।
कमलनि की शोभा निरखी, नैंन कमल न अघात॥ २०५॥
नाभि कमल निरखि कहूँ, मन गति ह्वै गई पंगु।
नवल कुंवरि को देखिये, कमल भई सब अंगु॥ २०६॥
बदन कमल लोचन कमल, चरन कमल कर चारु।
कमलनि को कहा कीजिये, कमलन को शृङ्गार॥ २०७॥
कमलन ते शोभा अधिक, सहज प्रकाशत अंग।
कमलन को शोभा भई, इन कमलन के संग॥ २०८॥

कमलन के जल जनम को, फल प्रगट्यौ अब आय।
हंससुता के संगते, एहि सुख निरख्यो पाय॥ २०६॥
पहुँचे अंग सुवास अलि, रहे कमलमें सोय।
संतन के सतसंग ते, सहज परम सुख होय॥ २१०॥
कमलन की उपमा कछू, मोपै कही न जाय।
लालन के लोचन रहे, ठौर ठौर लपटाय॥ २११॥
नख सिख सरस सिंगार करि, दरश दिखायो आनि।
मुसकानी मन में प्रिया, पिय मन की कछु जानि॥ ११२॥
नव कमलनतें लाल कौ, कुंवरि करत शृङ्गार।
कमल बरन की पाग पर, राखे कमल संवार॥ २१३॥
करन फूल कानन कियो, कलिका कमल मगाय।
कण्ठमाल नव कमल की, दीनी कंठ बनाय॥ २१४॥
लटकत फोंदा कमल के, पहुँची परम अनूप।
पदिक रच्यौ उर कमल को, सब भूषन को भूप॥ २१५॥
अरुण कमल दल को सुचिर, रचि बेंदा दिय भाल।
पहराई नव कमल की, उर बैजंती माल॥ २१६॥
नख सिख भूषन कमल के, शोभित परम रसाल।
कालिंदी फूली मनों, अमल कमल के जाल॥ २१७॥
जब परसत कर कमल सों, नव कमलनसे अग।
कमल जात छुटि कमल सों, होत पुलकि सुर भंग॥ २१८॥
आनंद उर न समात अति, देखि प्रिया अनुराग।
आज आपने जनम को, मानत पिय बड़ भाग॥ २१९॥

प्यारी अपने भेद सों, राखी नाव दुराय।
प्रेम विवस प्रिय जानि के, लीनो कंठ लगाय॥ २२०॥
कमल सजाती जे हुते, मिले न कबहू संग।
हुलसि हिये सन्मुख सबै, हंसि लपटाने अंग॥ २२१॥
इन्दीवर अरु कोकनद, सकल कुमुद के हार।
अरसि परसि मिलि एक भे, रह्यो न कछू विचार॥ २२२॥
अहो प्रिये या कमलते, निकसि चल्यो अलि धाय।
देखउ मम उर हार पर, रह्यो अनिल लपटाय॥ २२३॥
अब तव करन सरोज पद, करते अति गुंजार।
मन करषत नहिं कौन को, शोभा अमित अपार॥ २२४॥

क०—चंचरीक चखन के आगे ते टरें न नेंक, चकित ह्वै प्यारी बल अंचल चलावहीं। परम कुटिल ढिंग ढिगते न न्यारे होत, भामिनी अनखि भुज लता सों उड़ावहीं। तैसेई कंकन-जाल बजत ललित गति, सांवल कटाच्छ इत उत फिरि आवहीं, मधुप समूह जानि होत हैं विकल ज्यौं ज्यों त्यों त्यों मन मोहन जू मन सचु पावहीं॥ २२५॥

दो०—तब लालन लीला कमल, लिये ललित कर धाय।
हुतो मत्त मुख मोद सों, दीनो मधुप उड़ाय॥२२६॥
सावधान हूजे प्रिये, विकल होत केहि काज।
मधुसूदन तो गृह गयौ, लीने संग समाज॥ २२७॥
हा मधुसूदन हा मधुर, हा मन मोहन लाल।
अहो कुँवरि लोचन कमल, गये कहां एहि काल॥ २२८॥

कै भूली वंशी कहूँ, गये सुमन हित धाय।
कै रूसे रस रूसनों, कै परिहास सुभाय ॥ २२६ ॥
फिर आई सुनि सहचरी, सब रोकी कर सैंन।
नेंक सुनहु मुख प्रिया के प्रेम अमृत से बैन ॥
हो प्रीतम हो प्राण पति, अहो प्रेम प्रतिपाल।
रहे कहां अबलों कुंवर, बीत गये बहु काल ॥ २३१ ॥
नवल प्रेम के पंथ में, परम अटपटी रीति।
अन मिलनो मिलनो नहीं, मिलै न मन परतीत ॥ २३२ ॥
प्रिया विवस पिय देखिके, रहे परम विस्माय।
अति आतुर उठि धाय कै, लीनी कंठ लगाय ॥ २३३ ॥

क०—जब सुकुमारी भरि भरि लीनी अंक वारी, देखत विहारी जू की न्यारी गति ह्वै गई। कहूँ दीठ डारी कहूँ श्रम कन कारी कहूँ पुलकित वारी सब अंगन में छै गई। विकल हैं भारी कहुँ सुधि न संभारी कहें कहां मेरी प्यारी जब कंठ लाय कै लई। कहिये कहांरी कबहुँन सुखकारी यह मिल हूँ दुखारी कछु नेह गति हैं नई ॥ २३४ ॥

दो०—छिनु विछुरे ते मिलन की, परे सधि जो आय।
तो मन में संभ्रभ उठै, प्रेम विचित्र सुभाय ॥ २३५ ॥
विवस देखि दोउ कुंवरि को, सहचरि आई धाय।
अपनी अपनी बुद्धि के, कीने कोटि उपाय ॥ २३६ ॥
मणि मंत्राबलि औषधी, कीने जतन अनेक।
तंत्र मंत्र अरु जंत्र सब, लगे न कोई एक ॥ २३७ ॥

कृष्ण नाम मंत्रावली, कही कुंवरि के कान।
राधा अक्षर रस सने, पियहि सुनाये आन॥ २३८॥
उठ बैठे दोउ कुंवरि वर, परम अनूपम भाँति।
सिथिल अंग रस सों सने, अरस परस अरसांति॥ २३९॥
तब प्यारी पूछत कछू, हो पिय परम सुजान।
बिना काज अब लों कहौ, कहां हुते प्रिय प्रान॥ २४०॥
अहो प्रिया तब वदन छबि, निरखत लागि गये नैन।
तब मूरति आगे चली, कछुक गूढ़ दै सैन॥ २४१॥
ता पाछे तब पगन के, चल्यौ संग ही जाय।
कर पहुँचे पहुँचे नहीं, मिले मिल्यौ नहीं जाय॥ २४२॥
कर अंतर अंतर बढ्यौ, तज्यौ न अंतर जाय।
दरस निकट परसन विकट, कठिन परी गति आय॥ २४३॥
जबहिं दूरि तब निकट प्रिय, जबहिं निकट तब दूरि।
जब सुख तब दुख जानिये, सुख में दुख रह्यौ पूरि॥ २४४॥
सुरति कबहुँ सम रस कबहुँ, संभ्रम कबहुँ वियोग।
संजोगी विरही कबहुँ, कबहुँ विरह संजोग॥ २४५॥
प्रेम अटपटी बात कछु, कहत बनें नहीं बैन।
कै जाने मन की दशा, कै नेही के नैन॥ २४६॥
नौका में नव कुमरि मिलि, कीने नवल विलास।
दिनमणि अस्ताचल चल्यौ, प्रगटयौ निसा निवास॥ २४७॥
ताही समये उदित भो, उड़न सहित उडुराज।
विलसत षटदस कलनसों, लीने संग समाज॥ २४८॥

देखत ही मन दुहुन के, उपज्यौ अति आनंद।
अति रस अपनी प्रिया सों, विलसत परम सुछंद ॥ २४६ ॥
दृष्टि परि गयौ पुलिन इक उज्जल परम अनूप।
जगमगाति अति वालुका, कोटिक चंद स्वरूप ॥ २५० ॥
देखत शोभा हिये में, उपजौ परम हुलास।
यहै मनोरथ मन कियौ, हिल मिल खेलें रास ॥ २५१ ॥
सरस बसन तेहि समय के, कीने अंग सिंगार।
फूलन के भूषन बने, उर फूलन के हार ॥ २५२ ॥
मोरमुकुट कटि काछिनी, उर वैजती माल।
नूपुर कंकण किंकिणी, वाजत परम रसाल ॥ २५३ ॥
आय कुंवर ठाड़े भये, नवल कुंवरि के संग।
अहो प्रिये या पुलिन में, उपजत कोटि तरंग ॥ २५४ ॥
छिन छिन छवि नूतन उठै, देखहु नैन निहार।
कहत बने नहि बैन सों, सोभा अमित अपार ॥ २५५ ॥
कै कपूर की धूरि है, किधों चंद को चूर।
सरस सरोवर में किधों, धरे सुधा कन पूर ॥ २५६ ॥
कालिंदी को जल किधों, जग मगि रह्यो अनूप।
कै उज्वल रस को मनों, राजत परम सरूप ॥ २५७ ॥
जगमगाय रहि पुलिन अति, कोटि भानकी कांति।
विकसि रह्यौं वासर मनौ, निशा न जानी जात ॥ २५८ ॥
परम मधुर ते मधुर अति, कोमल नवल अनूप।
अंगुरी गढ़े न रज उड़ै, राजत परम सरूप ॥ २५९ ॥

कालिंदी निज करन सों, रचना रही बनाय।
सोभा की सीमा सबै, रही पुलिन में आय॥ २६०॥
जलधारा चहुँ दिशि बहै, उपमा कही न जाय।
हंससुता अपनो हृदौ, राखो मध्य दुराय॥ २६१॥

क०—एक ओर पुलिन के नवल नलिन फूले, एक ओर अलिन की पंगति सुहाई है। एक ओर कुंदर सों सरस सुगन्धि अति पवन को परस परम सुखदाई है॥ एक ओर सुमन जरद जुही फूली सब तैसी ये सरद सुठि सरस जुन्हाई है। एक ओर वंशीवट सीमा सब सुखन की ठाढ़े ह्वै कुंवर तहां बांसुरी बजाई है॥ २६२॥

दो०—सारस हंस मयक मृग, थकित रहे सुनि गान।
शैल भये सरिता सबै, सरिता शैल समान॥ २६३॥
मन मोहन बोली सबै, मुरली मधुर बजाय।
जहां तहां ते सहचरी, सुनि आई सब धाय॥ २६४॥
जुरि मंडल ठाड़ी सबै, अपने जूथ बनाय।
मध्य लाल अरु लाड़िली, निरतत अगनित भाय॥ २६५॥

क०—विविध विलास के हुलास न कहे परत खेलत रसिक रास मंडल रहसि कै। सखिन के जोर चहुँ ओर जुरि ठाड़े भऐ मध्य घन दामिनी से रहे लाल लसिकै॥ मुकट की लटक चटक चारु चंद्रिका की आछे भांति पीत पट बांध्यौ कटि कसिकै। माधुरी की निधि रस निधि गुन रूप निधि सब ही के मन वस करत विहंसि कै॥ २६६॥

क०—रहसि रहसि विहसनि नाना रसनि सों, रास रस खेलत रसीले रस रंग में। कोक कला कोविद सुधंग संग नाचें मिलि, उपजत कोटिक तरंग अंग अंग में॥ कामिनी दामिनी सी निकस दुरि जात कहूँ, कहां चपलाई ऐसी खंजन कुरंग में। तैसोई चपल चारु लोचन ललित अति, प्रगटत नाना गति भोंहन के रंग में॥ २६७॥

क०—नृत्य लास भ्रू विलास मन्द मन्द चारु हास, रास में विलास केलि कोटि कोटि कामिनी। कुंडल मृदु गंड लोल चंचल अचल सुलोल श्रम कन शोभित कपोल कनक दामिनी॥ परम मधुर करत गान लेति सरस सुधर तान निकसत दुरिजात मन घनहुँ मेघ दामिनी। टूटत मन कटि प्रदेश छूटत कल कुसुम केस लूटत सुख सिंधु सरस भाय भामिनी॥ २६८॥

क०—अरस परसि भुज अंसनिसों सो है अति, रास में रसिक दोऊ रंग रस भीने हैं। माधुरी तरंग अंग अंग न समात कहूँ, झलक तरंग रंग बने पट झीने हैं॥ लखत न कोऊ छल बल दोऊ छैलन के काहू भांति पलट तमोल मुख लीने हैं। कौंन भेद कौंन भाव कौंन प्रेम कौंन रस प्यारी पिय परसि कपोलन सों कीने हैं॥ २६९॥

क०—सोधों अति सरस सुगंधि बहु भांतिन के भीजे हैं बसन तन मृग मद मेंदसों, चरण की माधुरी चलत मंद मंद गति खिसत कुसुम कछु छीण भई भेद सों॥ भांति भांति

मान लैके वाम भुज अंस धरि, भामते के ढिग ठाड़ी भई काहू भेद सों। रस भरयौ रूप भरयौ सुख के सरूप भरयौ सोभित है मुख कछु श्रमित प्रस्वेद सों ॥ २७० ॥

क०—माधुरी की रास सब शोभा को निवास जहां, खेलत रसीले रास मंडल वलित री। नूपुर कंकन कंठमाल कंठ शोभित है, किंकनी सुकटि कलि कूंजति ललित री ॥ भृकुटी विलास मृदु पद न्यास नृत्य लास वदन विकास कोटि मदन दलित री। मुरली की धुनि मंद मंद गति बाजति है, ताके अनुसार चारु लोचन चलतरी ॥ २७१ ॥

स०—क्रमसों कुसुमावलि शीश गुही कवरी कलि गूंथि दई कसिरी उर चंचल अचल चारु चलै चख चाहनि चित्त किये वसिरी ॥ सुठि शोभित है मुखसों श्रम के कन भाल में जाल रहे लसिरी। सबके मन सीतल सींचि किये जु सुधारस सिंधु सबै शशिरी ॥

क०— कमल से लोइन ललित अति शोभा देत कुंवर के संग तौ विराजें कोटि कामिनी। अपने अपने कर जोर जुरि ठाड़ी भई, चहुँ ओर मानों घन घेरो आय दामिनी ॥ रूप गुन गान रस एक एक ते सरस निर्तन सकल नाना भाइन सों भामिनी। रस सीम रास सीम परम विलास सीम राजे रास मंडल में माधुरी की स्वामिनी ॥ २७२ ॥

रास रस खेलि रस भीजे हैं रसिक दोऊ रस वस भये रूप माधुरी निहारि कें। बैठे हैं सरस दोऊ सुमन की सेज पर, अरस परस भुज भुजनि पै डारिकें ॥ बार बार विविध विला-

सन सों प्यारौ लाल पोंछत है प्यारी जू के श्रम कन वारिकें। वसन संभारि सब भूषन शृंगार कर धरत बदन पर बेसरि सुधारकें ॥ २७४ ॥

कोमल अमल कमल फूल की सेज पर बैठे हरषित दोऊ रास रस खेलि कें। शोभा के तरंग अंग अंग न समात कहूँ कहूँ भांति प्यारी जू कै कंठ भुज मेलि कें ॥ करत सु अपने मनोरथ सफल आनि जो जो उपजत मन कौतुक सहेलि कें। कोऊ हंसावति रिझावति बहु भांति कोऊ कोऊ मिलि गावत विलास काम केलि कें ॥ २७५ ॥

संग लिये सरस सहेली अलबेली सब अरस परस पिय प्यारी मिलि गावहीं। खरज मध्यम कल धैवत ऋषभ ध्रुव नाना भांति सुरन के भेद उपजावहीं ॥ कोऊ तान लीनों प्यारी पहुँचि सकै न पिय साधु साधु कहि जिय खरे सचु पावहीं। भीजि रहे तन मन पुलकि पसीजे अति रीझ रीझ पगन कों माथे में उठा वहीं ॥ २७६ ॥

दो०—कीने बिविध विलास रस, जो उपजो जिय मांहि।
अब बैठो चलिके प्रिये, बंशीवट की छांहि ॥ २७७ ॥
कर गहि लीने कुंवरि के, निरखत मुख चहुँ ओर।
टारी टरत न नैंक हू, परत दीठ जेहि ठौर ॥ २७८ ॥
फूले नवल निकुंज सब, उपजो परम हुलास।
प्रिय तब अंग सुवास ते, ह्वै गयौ विपिन सुवास ॥ २७९ ॥

वंशीवट की माधुरी, जो कहिये कछु बैन।
नैंनन रसना कीजिये, रसना कीजै नैन ॥ २८० ॥
सघन विपिन चहुँ दिशि वन्यौ, करि न सकत कौउ गौन।
जे मारग निकसत कुंवरि, अखुठि करत तहाँ पौन ॥२८१॥
आय निकस ठाड़े भये, थकित रहे छवि देखि।
मनहुँ ठगे से ठगि रहे, लगे न नैंन निमेषि ॥ २८२ ॥
वंशीवट छवि निरखि कै, विवस जात ह्वै देह।
इमि वेली द्रुम लतन सों, वांध्यौ कोन सनेह ॥ २८३ ॥
खग मृग द्रुम सेवत सदा, धरे सरस निज रूप।
वंशीवट राजत मनहुँ, सकल विपिन को भूप ॥ २८४ ॥
भूमि रही पत्रावली, छवि वरणी नहिं जाति।
फल माला नख सिख मनों, कोटि मकर की कांति ॥ २८५ ॥
निकसे पल्लव अरुण अति, रहे प्रेम रस पागि।
दुरयौ प्रगट कीनौ मनौ, अंतर को अनुराग ॥ २८६ ॥

क०—बार बार रीझि रीझि कहत विहारीलाल देखिये निहारी प्रिये शोभा वंशीवट की। झलकत जल में झलकि नाना भांतिन की भूमि भूमि डारे सब धरनि सों लटकी ॥ चहुँ ओर नाचत चकोर मोर रस भरे सारसनि लागी जक तुव नाम रटकी। इन सौ हितू न मोकूं कोऊ और लागत है कहिये कहां लों कौंन जानें मेरे घट की ॥ २८७ ॥

सौं दे कै कहति प्यारी सहज सुभाई कछु, निपट अटक मेरी परी वंशीवट सों। दुरि ह्वै ते दुति नैन निपटनी की लागत

आय आय शोभा नैंक देखिये निकटसों ॥ झलकत झांई तब तन की झलक यामें भूमि रही डारे सब जमुना के तट सों। ठग के ठगे से जैसे ठठकि रहित मन ठौर ठौर रचना सु रची कौन ठटसों ॥ २८८ ॥

नीकी भांति नैंन भरि निपट निकट ह्वै कै वंशीवट की विलास माधुरी निहारिये। कौन कौन रचना रची है नाना भांतिन की याकी सब शोभा अति मन दे विचारिये ॥ तैसी ये सरस नव सुमन की सेज रची विपिन विहारि सब याही में विहारिये। बैठि कै शृंगार नव फूलन को कीजे भूषा भूषन को भार सब तनते उतारिये ॥ २८९ ॥

श्यामा श्याम बैठे नव फूलन को सेज पर, अरस परस दोऊ करत सिंगार हैं। फूलन सों बैनी गुही शीश फूल फूलनि के फूल रहे फूल तन फूलन के हार हैं ॥ फूलन के रसन दसन तन फूलन के नख सिख फूले मानो फूलन के डार हैं। फूलन को भार न सम्हारो जात काहू भांति प्यारी पिय फूल हूते अति सुकुवार हैं ॥ २९० ॥

काहू रस सरस सो रसिक रसीले लाल अरस परस रस बातें वतरावहीं। भामती सों भामते कहत सब भामते जू भामते की भामती तो सबै मन भामहीं ॥ पिय की जिये की सब जिय मेंहीं जानि लेत, अपने जिय की कछु काहू न जनावहीं। कोऊ काहू भेद की निकसि मुख जात जब दोऊ रिझवार रीझि रीझि मुसकावहीं ॥ २९१ ॥

भीजे रस सरस रसीले रस वातन में आरस में रसिक कछुक अरसाने हैं। सोय गये संग नव सुमन की सेज पर अंगन सों अंग रस रग लपटाने हैं॥ माधुरी के रस में विवस भये जात पिय बोलत न मुख विनु बोल हूँ न जाने हैं। लालन कौ लालच लड़ेती जू लखें हैं जब लाज भई लोयन तो निपट लजाने हैं॥ २६२॥

मन के मनोरथ करत नाना भांतिन के विविध विलास कौन पार कहूँ पामें हीं। सुख के समूहन में परे हैं विवस अति उमगि उमगि दोऊ उर लपटावें हीं॥ रसन की सीमा सब कोक में न कही जात जहां तहां सब देख लाजन लजामें हीं। जैसी कछु जिय में उपजि कै समाय जात तैसे रस रसना सों कैसे कहआवेहीं॥ २६३॥

श्यामा श्याम सोए सेज सुमन सुगन्धि पर रंधिन लगी सहेली करत विचार हैं। प्यारी जू कों प्यारौ तन मन में सिंगार मानों प्यारे जू के प्यारी उर मोतिन को हार हैं॥ तन सुख बसन लसत नाना भांतिन के लसत परसपर शोभा कौन पार है। देखे न अघात छिन छिन ललचात अति माधुरी के नैनन कौ ऐसो हिय हार है॥ २६४॥

अरस परसि सहचरि सुख देखि देखि रीझ रीझ हिय में विवस ह्वै ह्वै आवहीं। लोचन सजल कंठ प्रेम जल पूरि रह्यौ अपने जिय की बात काहू न जनावहीं॥ उपमा उठावति पै आवति कछु न कही उपमाको उपमै अनेक उपजावहीं।

माधुरी की निधि में निकसि डूबि जात फिर फिर निकसत पै न पार कहूँ पावहीं ॥ २६५ ॥

दो०—छिन डूबहिं निकसहि छिनक, निकसि डूबि फिर जांय।
प्रेम सुधा के सिंधु में, दोऊ संग समांय ॥२६६॥
कहां कहां लों वरनि में, वशीवट की केलि।
वा सुख में समझे सोई, जे निज संग सहेलि ॥ २६७ ॥
पिय प्यारी को विहरिवो, राखी हीय दुराय।
छिन छिन रोकत अधिक तउँ, निकसि निकसि मुख जाय ॥
जैसे सोये स्वप्न में, कहियत हैं कछु बात।
मद मातो बोलत कछू, निकसि कछु ह्वै जात ॥ २६६ ॥
जाको यह सब केलि रस, जल वन पुलिन विलास।
तिन रसना में आनि के, कीनौ सदा निवास ॥ ३०० ॥
आपुन अक्षर आपु जस, आपुन कियो प्रकास।
आपुन ही मो हिये में, ह्वै रहे परम हुलास ॥ ३०१ ॥
ललितादिक सब सहचरी, कीनो परम सहाय।
सरस माधुरी जुगल को, निरखि सदा सुख पाय ॥ ३०२ ॥
श्री वृन्दावन मोद सों, परम मधुर गुण गाय।
नवल लाड़िली लाल को, नव नव लाड़ लड़ाय ॥ ३०३ ॥
अहो माधुरी तोहिं हम, दई वरन की रास।
पिय प्यारी के संग तुम, निस दिन करहु विलास ॥ ३०४ ॥
प्रेम माधुरी मन छक्यौ, रूप माधुरी नैंन।
मैंन माधुरी मन छक्यौ, छके कहत मुख वैन ॥ ३०५ ॥

श्री चैतन्य सुदृष्टि तें, विविध भांति अनुराग।
पिय प्यारी मुख कमल को, पायो प्रेम पराग ॥ ३०६ ॥
श्री ललितादिक सहचरी, कह्यौ कंठ भुज मेलि।
निरखि माधुरी नैंन भरि, वंशीवट की केलि ॥ ३०७ ॥
रूपमंजरी प्रेम सों, कहत वचन सुख रास।
श्रीं वशीवट माधुरी, होहु सनातन वास ॥ ३०८ ॥

❀ इति श्री वंशीवट माधुरी ❀

अथ श्री केलि माधुरी

चौ०—श्री चैतन्य चरण चित धरों। वन विनोद कछु बरनन करों॥
श्री राधा रसिक रसिक सहचरी। रसिकन कृपा केलि रस करी॥
श्री वृन्दावन अगम अपार। कहियत कछु कृपा अनुसार॥३॥
श्री वृन्दा जो होंय कृपाल। सूझे कछुक प्रसून प्रवाल॥ ४॥
सदा सनातन रूप विराजै। बरनत ही जिय अति ही लाजै॥
अति लाजत कछु कही कहानी। जो कछु जिय में आय तुलानी॥
जलपत ही जिय आवत लाज। जके रहत जे हुय कवि राज॥
पूरनमासी सदा प्रकास। जाकेई सब केलि विलास॥ ८॥
ताकी जोन्ह जगमगे कुंज। अंतर बाहर सब सुख पुंज॥९॥
दो०—वृन्दावन की बात में जितै जितै मन जात।
तितै तितै ताते अधिक चितवत चित न अघात॥ १०॥
छं०—आगम सरस बसंत विविध रंग फूले तन वृन्दा

विपिन विलास। मोह्यो मैन नैन अति विलसति ललित लता दल कलित हुलास। सौरभ सुभग सुवास सुखद रति वस्यौ विलासनि अंग सुवास। मादक मधुर विमल फल प्रगटित नवल माधुरी केलि प्रकास॥ ११॥

सो०—नवल वेश नव नेह, नव किशोर नव रँग भरे।
नव विलास भर मेह, बरषत जनु नव बूंद ते॥ १२॥

चौ०—नव केशरि के कुञ्ज अनूपा। नव किशोर दोउ सुखद सरूपा॥
रजनी शेष रह्यो जब आई। तब सजनी बैठी अकुलाई॥१४॥
अपनी सोंज सबै कर लीये। झाँकत नैन झरोखन दीये॥१५॥
कोउ वीना कर मधुर बजावति। कोउ सारंगी सरस सुनावति॥
कोउ रागिनि सों राग मिलावत। कोउ भैरव विभासहि गावति॥
सोये सुनत सुघर वर राय। यह तन दृष्टि परी फिर जाय॥
नैना बहुरि गये ललचाय। अति सरसोहें उठे जँभाइ॥
लपटि रहे दोउ ललित भाँति। श्यामा श्याम प्रिय गौर कांति॥

दो०—एकै मन एकै सुतनु, एकै चिन्ह चिन्हार।
प्रिया पीय के पिय प्रिया, कछू न होत विचार॥ २१॥

स०—सैन कर्‌यौ सुख सेज सुगंधनि रैन जगे रति नैन लगे हैं।
चैन परे न विना चितवे मुख वैन कहैं कछु प्रान मिलैहैं।
जीय उपजै सोई जान कहैं जनावत लौचन के ढिंग जौहैं।
हेरि प्रिया पिय के हिय की गति भोंह चले चख चारु हँसौ हैं।

सो०—नैनन हीं की बात, नैनन में दीनी सकल।
बहुरि कछू मुसिक्यात, सुधि न परे तेहि घात की॥ २३॥

चौ०—छल नव छैल बहुत विधि जानत। ताते छगुन छबीली भानत॥
छ्वै न सकत छवि की एक छटा। विन कटाक्ष छाया बुधि घटा॥
अवनति छुटी अलक उलटावति। सुरभी कछुक अधिक सुरभावति॥
पोंछत पलकन पीक कपोलनि। डग मगात कर नैन सलोलनि॥
हंसि हंसि हिये हार कर परसत। कबहुंक मिसते मनिदुति दरशत॥
अहो नागरि यह नग दुति न्यारी। प्रगटी कुञ्ज भवन उजियारी॥
भामती भोर भयो मति जानहु। जो हम कहत सों जिय में आनहुँ॥
छिपै न छत्र छांह शुक्रन की। शशिन प्रकाश सघनता वन की॥

दो०—दिन करते दुति दस गुनी, दिपै देह की जोति।
किरन मनो बगरी सकल, उगरी अरुन उदोति॥ ३२॥

छ०—अरस अंग रस सरस दरस रस दूल्है दिखरावति।
अरस गात मुसकात बात बहु भाँति मिलावति।
कबहुँ कपोलनि केलि मकर पत्रिका संवारति।
स्वेद सकल तन होत सिथिल गति मति न संवारति।
कर धरत रहैं झुकि धरनि पै बरन पलट तेहि छिन गयो।
नब करन कुँवरि मन हरन को उमगि लाय उरसों लियो॥

दो०—त्रिवस भये पीय देखि, विलगि भई कछु देह गति।
लिये लाल उर लेखि, लटकि रही सुख सेज पर॥ ३४॥

चौ०—नवल ओढ़नी ओढ़ सुरंग। लपटाने अंगन सों अंग॥३५॥
विना पान मुख पान खवावति। विना दरस आदरस दिखावति॥
विन दुकूल कंचुकी उर धरै। भूषन विन सिंगार सब करै॥
करत मनोरथ जो मन भावति। जिय की बात पियहिं न जनावति॥

ज्यौं ज्यौं चपल होत नव नागरि। त्यौं त्यौं सरवस वाम उजागरि॥
दीठ ओट कर दीठ बचावति। पद नख छटा न परशन पावति॥
दो०—लोचन लोभी लाल के, लगे लगे हीं भाँति।
छुटे न छिन छवि के छुवत, छायो ज्यों लपटात॥ ४१॥
छ०—सेज सुधा निज सरस भूमि मंडित सुवास बन।
विमल बीज पिउ बै लता चम्पक तमाल तन।
सींच सुरांत रति वारि नव कुञ्ज केलि कर।
नव दल नेह विलास हास कुसुम रहे ढरि।
मालि मनोज नव चौज कोष फल उरोज सुफल फले।
अति ललित वास रस वलित ह्वै आली अलि लोचन चले॥
सो०—फूली चम्पक वेलि, झूली श्याम तमाल सों।
अरुझी नेहनि वेलि, कठिन भयो सुरझाय वो॥ ४३॥
चौ०—फूली लता देखि बहु भाँती। सेनन में सजनी मुसिकाती॥
फूले अङ्ग विविध रंग फूल। फूले मन तन सेज दुकूल॥ ४५॥
फूले सैन फूल बहु रंग। नवल प्रीति सुठि सरस सुरंग॥ ४६॥
फूलन के तन सरस सिंगार। फूल हिये फूलन के हार॥ ४७॥
रोम रोम मौरी सुकुँवारी। नख सिख सो फूली फुलवारी॥
फूली देखि फूली सहचरी। समझ जानि सेवा अनुसरी॥ ४६॥
अधिक भार फूलन के दुरी। विनती फूल फूल सों भरी॥ ५०॥
दो०—तन मन बन सब को रह्यौ, सरस फूल सौ फूल।
साखा पत्र प्रसून पर, परे मधुप रस भूल॥ ५१॥
छ०—कौन पहिरै दुकूल भूषन विकूल सब, फूल हू को भारन

सँभार्‌यो क्यों हूँ जात है। अति सुकुँवार तन शोभा को सिंगार किये हास हू को हार हार हिये न समात है। सिथिल शरीर सौ रसीली मुख भीर अति, सौरभ समीर सों रसीली अरसात है। कह्यौ नहिं जात कछु मन अकुलात तहाँ, तन की निकाई जैसें नैनन की बात है॥ ५२॥

सो०—लिये फूल बहु भाँति, किये हिये के हार रचि।
आनद उर न समात, फैल रह्यौ सब फूल ह्वै॥ ५३॥

चौ०—एक फूल नैनन पर धरे। सीतल जानि सबै दुख हरे॥ ५४॥
एक माल करि कंठ लगावति। इक कानन अवतंस बनावति॥
एक फूल बीनत हैं जहाँ। फूल फूलत चौगुने तहाँ॥ ५६॥
लटकि रही फूलन के भार। फूलहुंते ऐ लता सुकुँवार॥ ५७॥
जो पै नहिं तमाल लपटाति। तो पै झुकी धरनि पै जाति॥ ५८॥
तरु तमाल के चंचल पात। प्रेम पवन बस पुलिकित गात॥
झुकि रही डार फलन में आई। जनु फल फल डार सों जाई॥
छिन छिन छांह लता पर किये। लता परस मधु करषत हिये॥

दो०—कोंन मिलन कोंने ढरनि कोंन परनि को भाव।
परि गइ लता तमाल सों सु कौन भाँति उर झाव॥ ६२॥

क०—नैंन अरसीले सु रसीले अति रस भरे विवस वसीले औ रंगीले रंग मगे से। निपट हटीले अरवीले रस की-ले तन गुनन गसीले वारवीले रंग पगे से। कछु मुसको है तिरछौंहें सकुचौहें कछु होत जात नोहे मन गोहे पग लगे से। ललित लसौंहे कछु लालच लगौं हे जनु सावक जगौंहें ढ़िंग डोलें डगमगे से॥ ६३॥

सो०—बैननकी गति और और नैंनन की कछु और गति।
लगहि जाहि जेहि ठौर ठौर रहे तेहि ठौर हीं ॥६४॥
चौ०—अति रस भरे उठे अरसाने। अंक मोरि करजोर जंभाने ॥६५॥
अंग अंग देखे सबै लुभाने। मन मनसासो फिर लपटाने ॥६५॥
हरषत भाल लोभ की ठौर। सरकत पान परस को दौर ॥६७॥
धरकत हियौ भरत अंकोर। छिन छिन होत और की और ॥६८॥
जियमें उपज बहुत विधि धरै। प्रिया पान दरशन अनुसरै ॥६९॥
दरशत प्रेम उदधि में परै। हाथन हाथ कह्यौ कछु करै ॥७०॥
छियौ न जात पगन पर छहां। कठिन मनोरथ जियके जहां ॥७१॥
मनहूँ को प्रवेश नहीं तहां। पांयन परस सो परसन कहां ॥७२॥
दो०—कोमल कोमल ते अधिक, मधुर मधुर कौ सार।
पुहकर हिमकर हेम को, सौरभतें सुकुंवार ॥७३॥
क०—उर न धरत कर कोमल किशोर प्रिय कमल के पात लै लै गात सों लपेटहीं। लागत हैं झांई मेरे तन की प्रिया के तन मन कहूँ श्यामताई लगे सोई मेट हीं। रंग रंग फूले लै लै अंगन दुरावत हैं निज पर छांही सब अंग में समेटहीं। बार बार परसि के देखत ऊपर सैन कछु भ्रम भयो भरि भुजा सो न भेटहीं ॥७४॥
सो०—परसे परस न होय, बिनु परसे ते विकलता।
पूरेहु सब तन तोय, चितै चित्र से ह्वै रहे ॥७५॥
चौ०—तब प्यारी कछु जतन उपायौ। चंपकली ते मधुप उड़ायौ ॥७६
नीलसार लै अंग छुवायो। तौ न कछु विश्वास जिय आयो ॥७७

मृगमद को तन लेप लगायो। नील कमल तन परस दिखायो॥७८
नीरज नेंन तौऊ भरि आये। तन प्यारी हंस कंठ लगाये ॥७९॥
अहो लाल गति कोंन तिहारी। चिबुक उठाय कहत हैं प्यारी ॥
बोलहु नेंक बोलि हों हारी। गई कहां चतुराई तिहारी ॥८१॥
अंचल लै पोंछत चख वारी। पहिरावति उर हार उतारी ॥८२॥
तऊ न हिये कछु होत संभार। परि गये कहूँ प्रेम के धार ॥८३॥
दो०—निपट कठिन गति प्रेम की, कठिन ते कठिन सरूप।
काढ़त जल तिय घडन कों, परत पहेलहिं कूप ॥८४॥
क०—मोंहन की गति देखि भूली गति मति सब मोंहनी उतारिवे कों जतन करत हैं। हार की लै मनि हरि होये सों छुवावत हैं कबहुँक हरि मनि कंठ लै धरत हैं। काँनन में कामकेलि मंत्र पढ़ि डारति हैं बैन उचारत नेंक नेंन उघरत हैं। औषधी तंबोल करि खंडित खवावति हैं अधर सुधा सों मुख सींचवो करत हैं ॥८५॥
सो०—परी सुरत जिय आय, रोम रोम भई सरसता।
देखहु सुधा सुभाय, मोहन को मोहन कियो ॥८६॥
चौ०—उठे लाल औरै कछु भांति। सिथिल गात सोभा न समाति।
कहत बात जिय अधिक सकात। कयौ कछु नेंनन मुसकात॥८८॥
प्रिया आजु सुपनों कछु पायौ। जनु कर गहि निज कंठ लगायौ
उर को हार हिये पहरायौ। हंसि हंसि कहत सु कहत न आयौ
दोहुँ मिलि पहिरायो एक चोल। अरु दींनों निज मुखहि तमोल
कानन बात भेद की कही। सो कछु जिय थोरी सुधि रही ॥

इन बातन को चित ललचावै। और कछु देखो नहिं भावै ॥६३॥
जो मन विकल विथा सब हरौ। जोई जोई कियो सोई फिर करो
सुपनो आज सांच करि पाई। तो पग ते पल पल न चलाई ॥६५॥
कह्यौ दृगन हंसि देखे नये। सुपने कहूँ सांचे हैं भये ॥६६॥
मन की नेंकु निठुरता हरौ। अबही सुपन सांचो सब करो ॥६७
हरी निठुरता हो अति सांच। एहिं तो कियो अधिक तुम वांच
कैसे करौं कहो तुम सोई। कहिये ताहि न जानें कोई ॥६६॥
कहौ अचानक कछु हम जानत। तो तुमसे कछु बल हैं मानत
ठानहुँ बल जो पै कछु ठनै। हम को बल जैसो कछु बनैं ॥१०१॥
कैसे जैसे सदा सुभाय। कै रोय वो कै छुइवो पांय ॥१०२॥
दो०—बीज नेह को रोयबौ, दल रोयबो सरूप।
मूल फूल फल रोयबो, ये रोयबो अनूप ॥१०३॥
चौ०—ढरकें नेंन देखि अति भारी। करी कृपा वृषभानु दुलारी॥
जो जो मनहिं मनोरथ कीये। सो सो सबै दुलहिन दिये ॥१०५
सो०—गयो रोयबो रोय, और सोयबो इन दयो।
सब दुख सुखहिं समोय, जगे जु काहू जगत में ॥१०६॥
क०—अरस परस अर वरषें विलास रस दरसें न दीन छीन
निशा नव रंगमें। नागर नवल गुण सागर विहार वार,
वार वार परें ढरि उछरि उछंगमें। हास परि हास कै प्रकाश
में सुवास अति हिये के हुलास को हुलास सखी संगमें।
उठत तरंग नाना रंगन के अंग अंग रसन की रासि होत
भौंहन की भंगमें ॥१०७॥

सो०—नेह रगमगे नैंन, बैंन रगमगे मैंन सों।
सरस रगमगी रैंन, विवस रमी सुख चैन सों ॥१०८॥

चौ०—नवल रंग नव रंग रगमगे। नव संगम नव अंग सगवगे नव पर्यंक रति जोति जगमगे। नख सिख नव सिंगार डगमगे शिथिल पाग जावक रंग भरी। शोभित लाल भाल पर खरी॥ प्रिया बनाय भांति तेहि धरी। देखहु कौन ढरनि सों ढरी ॥११२॥ सरकी सिथिल सुरंग रंग सारी। तरकी तन कंचुकि सुकुवारी करकी चुरी करन ते न्यारी। ढर की कहूँ मांग मुक्तारी ॥११४॥ गलित कुसुम रस वलित सुदेस। कलित चलित गति विलुलितकेश पलटि परे पट तिलक तमोल। कुंकुम कज्जल पीक कपोल॥

दो०—अदल बदल तनु ह्वै रहे, उलटि पुलटि शृंगार।
अजहूँ लों गथ गांथ की, नेंक न होत संभार ॥११७॥

छप्पै—उन्यौ नव रस मेह नेह निसि बरस परस पर
चुरी मेंड़ सब चुरी आड़ कहूँ दुरी महावर
श्रम कन सलिल अपार पलक खग प्रेम पसीजें,
सकत न पंख पसारि जुगल खंजन रस भीजै,
उड़ि सकत न सथिल सुभाव ते सुचपल चपलता मिट गई
ह्वदै भरे सरोवर सहचरी सुनहु विलास बरसा नई॥११८

सो०—नवल नेह के मेघ, महा मत्त बरषत सदा।
छिन छिन सहज सनेह, पोषत बाग विलास कौ ॥११९॥

चौ०—सरस भूमि देखी अति भारी। रति मनमथ मिलि करी कियारी दशन बीज नाना फुलवारी। रची रसनि झर अधर पनारी॥

श्रम जल बूंद वदन पर हरी। कछुक ढरकि मुक्ता पर परी वेसरि उलटि भांति केहि धरी। सींचत वदन सीस जल भरी॥

क०—सेवत मदन नित सघन विलास वन, अपनी हुलास रस सींचत सिरानी है। मोंहन ते मोंहन मधुर ते मधुर अति माधुरी लता की मृदु वेलि सरसानी है। दुति दल फूल फल फूलि रहे अंगनि में आली अलिन की मिलि केसी ललचानी है। ऐंड़ी वेंड़ी आछी नीकी कैसी अल वेली गति कोंन भांति नवल तमाल लपटानी है॥१२४॥

दो०—केलि माधुरी सिंधु के, कोऊ न पावत पार।
मन वच क्रम निशि दिन सदा, जीय विचारि विचारि॥
विपिन सिंधु रस माधुरी, कृपा करी निज रूप।
मुक्ता मधुर विलास के, निज कर दिये अनूप॥१२६॥

सो०—जिन मुक्ता की माल, गुही हिये हरि गुन सरस।
उज्जल परम रसाल, सब अंगन भूषन किये॥१२७॥

दो०—केलि माधुरी वेलि की, छिन छिन लेहु सुवास।
होहि सदा सुख सहज हीं, श्री वृन्दावन वास॥१२८॥
संवत सोलह सै असी, सात अधिक हिय धार।
केलि माधुरी छवि लिखी श्रावण वदि बुधवार॥१२९॥

❀ इति केलि माधुरी समाप्त ❀

अथ श्री वृन्दावन माधुरी

दो०—कृष्ण रूप चैतन्य की, सदा सनातन केलि।
गिरि वन पुलिन निकुंज गृह द्रुम द्रौणी वन वेलि ॥ १ ॥
सदा एक रस रसिक वर विहरत सहज सुभाय।
प्रिया पीय के जीय में, तिय जिय पीय समाज ॥ २ ॥

सो०—जिय जानें यह बात, कहत न आवे बात कछु।
फिर फिर हिये समात, पिय प्यारी को विहरवो ॥ ३ ॥
वरन न आवत लाज, वन समाज कैसे कहों।
कृष्ण केलि को साज, कहि न सकें कविराज कछु ॥ ४ ॥

दो०—श्री वृन्दा वृन्दाविपिन, कृपा करी निज रूप।
वन विहार को माधुरी, वरनत परम अनूप ॥ ५ ॥
मधु माधव ऋतु मोद सों, फूले सुमन सुवास।
वन विहरन मन दुहुन के उपज्यौ परम हुलास ॥ ६ ॥

चौ०—वृन्दा बात दुहुन की जानी। तब मन की मन अति सरसानी
वेलि वृन्द को दियो निदेस। तुम पहिरौ सब नव सत वेस ॥८॥
नख सिख अंगनि करों सिंगार। फूल वसन फूलन के हार ॥९॥

दो०—आजु प्रिया संग प्राणपति, करि हैं विपिन विलास।
फूलहु सुमन सुवास सब, जाके मन जु हुलास ॥१०॥

क०—आजु है सुदिन पिय प्यारी जू समाज लिये, उपज्यौ है कौतुक विपिन रस केलि कौ। अपनी अपनी चौंप कीनी है प्रकास वन कह्यौ न हुलास जात कछु द्रुम वेली को। ललिता

बिशाखा रंगदेबी औ सुदेवी सब पूर्‌यौ मनोरथ सखी जनम सहेली को। केहो केहो काहू भांति हाहा करि प्रान पति कर गहि प्यारी लै चलें है वन केलि को ॥ ११ ॥

दो०—आवति जाने प्रान पति, प्रिया सहित वन केलि।
सब अपनों उपहार लै, चली लता द्रुम वेलि ॥ १२ ॥

चौ०—सघन विपिन मारग छवि आये। कुसु मन पै पग पाँवड़े विछाये ॥
ह्वै गई भूमि सकल हरि यारी। जहाँ पग धरत धरनि सुकुमारी ॥
पल्लव पवन परस पर करहीं। द्रुम फूले सन्मुख अनुसरही ॥
पंचम सुर कोकिल कल गावै। मिलि मोरनी निसान बजावै ॥
बरन बरन वन वेलि सिंगारी। सोभित नव दल रंग रंग सारी ॥
पवन परस हित लता ढुलावत। उतकंठा मिलिबे कों धावत ॥
राजत नेंन सुमन रस भरे। अति गोलक तिनमें अनुसरे ॥१६॥

दो०—मधुप सुमन रसछाँड़िकै, चले बदन रस ऐन।
पिय प्यारी के लेन को, पठई पुतरी नेंन ॥ २० ॥
वृन्दावन की माधुरी, मन को मन हर लेत।
अपने सहज सुभावते, सब अंगन सुख देत ॥ २१ ॥

क०—नेंनन को सुख नव नवल निकुंज गृह कह्यौ न परत है हुलास कछु मन को। कुसुम सुवास कैसे नासिका को देत सुख देत सुख कानन को गान मधुपन को। रसना को सुख कैसो सरस रसाल फल-पवन परस कैसो होत सुख तन को। चातुरी सों ऊँचे चारु चिबुक उठाय कह्यौ अहो प्रिये देखिये निहार सुख बन को ॥ २२ ॥

दो०—वृन्दावन की बात कछु, कहत बने नहिं बैन।
नैंन समाने विपिन में, विपिन समाने नैन ॥ २३ ॥
मुकुलित मल्ली मालती, मंजुल मधुर सुवास।
जुही सुही फूली सबै अपने सहज हुलास ॥ २४ ॥
कूंजा करणा केवड़ा, कर्णिकार कैल्लार।
वेलि चमेली मौलश्री अति सौरभ सुकुंवारि ॥ २५ ॥
किंशुक केवरि कदलिदल, कृत्य मालि कचनार।
कुंदी कुन्द सुकुन्दनी, पारिजात मंदार ॥ २६ ॥
चंपक को चंपकलता, दीनों कंठ लगाय।
ए दूल्हा और दुलहिन, दोऊ सरस सुभाय ॥ २७ ॥
सरस सेवती लतनिसों, लपटेहु श्याम तमाल
निपट कटीली नायका, नायक परम रसाल ॥ २८ ॥
लता माधुरी अति मृदुल, मोदक मई सुख जोग।
उरझी कठिन कदंब सों, कौंन बन्यौ संजोग ॥ २९ ॥
वक्र ढरनि वक्रहि चलनि, वक्र मिलन गति केलि।
तरुवर सरस सुभायते, सहज वाम पर वेलि ॥ ३० ॥
सहज लता कोमल सरस, फूलि रहत निशिभोर।
मन कोमल तन वक्रता, तरु तन मनहि कठोर ॥ ३१ ॥
सब कुसुमन में केतुकी, जस सौरभ रह्यौ छाय।
मधुप कठिन कंटक सहै, तऊ अनत नहिं जाय ॥ ३२ ॥
लंपट लोभी लालची, इनहिं कछू नहिं लाज।
आदर अन आदर कहा, निज कारज सों काज ॥ ३३ ॥

हेमजुही के कुसुम पर, रह्यौ मधुप लपटाय।
जनु बैठो शृंगार रस कनक सिंगासन आय॥ ३४॥
यह न होय शृंगार रस, अरु नहिं मधुप रसाल।
सब कुसुमन मिलि दीठ उर, दियौ दिठौना भाल॥ ३५॥
कुसुम कुसुम रस लेत अलि, मुख पराग लपटाय।
नवल माधुरीलता को, छुवन न पावत पाँय॥ ३६॥

क०—मौन गहि बैठी नेंकु मांननि मनाय कछु, मानिनी लता हो मान कैसौ मन धारो है। एक रस काहू सों न रस के सुरस रह्यौ एक सुमन ही मन नीरस संचारौ है। आवत मधुप जानि माधुरी लता के ढ़िग, प्रथमहि आनि पौन पायन निहारयौ है। आगे सहचरी सावधान ह्वै प्रकाश कियो, परसि न देत पाँय परि परि हार्‌यौ है॥३७॥

दो०—प्रिया सहेली रसिक पिय, सहित सखी रस रास।
विहरत डोलत विपिन वर, वात वात पर हास॥३८॥

चौ०—फूलि रही चहुँदिश फुलवारी। चंपक वकुल गुलाव निवारी देखहु प्रिये विपिन की शोभा। उपजत हैं कछु मन की लोभा॥ छांड़हु लता मान घर संग। ह्वै है कछुक रंग में भंग॥३९॥ कहुँ सुरंग दारिम सुमनाली। कहुँ रस भरे करक फल पाली॥ कहूँ तमाल कदम्ब रसाला। कहुँ डोलत मधुपन की माला॥४३॥ कहुँ वोलत कोकिल कल वानी। लोलत कहूँ लता सरसानी॥ नाना विधि के कुंज अनूपा। गुंजत खग वर पुंज सरूपा॥४५॥ एक कुंज सोभित हरियारी। एक उज्वल एक अरुण सिंगारी॥

एक पीत पीतहि रंग रंगी। एक सांवरे रंग सगबगी ॥४७॥
एक कुंज केसर की नीकी। अहो प्रिये मम जीवन जी की ॥४८॥
एक नागरि केशरि की न्यारी। एक प्रेम पुन्नाग सँभारी ॥४९॥
मन को हरन मैन एक कुंज। जहाँ तहाँ मधु-पन के पुंज ॥५०॥
शोभा ललित रस नवल कुंजकी। चंचल मन गति चलत लुंजकी॥
जहाँ तहाँ कुंजन की काँति। सेत अरुण फूली बहु भाँति ॥५३॥
सरस कुञ्ज सिंगार हार की। रटत कुसुममनगति सुकुँवार की॥
रची सेज घर कुसुम चारु की। सुरत होत मन रस विहार की॥

दो०—सप्त वरन के कुञ्ज को, सवते सरस प्रकाश।
फूलि रह्यौ पश्चिम दिशा, पत्र प्रसून सुवास॥ ॥५६॥
वाम दिशा बारिज विविध, विकसि रहे बहु भाँति।
पवन परस डोलत नहीं, मुख छवि पर बलि जात ॥५७॥
दक्षिण सरस अशोक के, शोक रह्यौ नहीं गात।
अहो प्रिये पद परसिते, अति अनुराग चुचात ॥५८॥
सन्मुख श्री संकेत की, शोभा कही न जाय।
ललित-लता चहुँ ओरते, रहीं कंठ लपटाय ॥५९॥
मुक्त लता चंपक लता, पाटल परम रसाल।
चहुँ ओर राजति सरस, विशद कंदम्वनि माल ॥६०॥
जलसुगंध सरवर रचे, तरवर परम रसाल।
कुसुमाबलि षट ऋतुन की, प्रगट एक ही काल ॥६१॥
अलि कुल खग कुल हँस कुल, करत कुला हल मोर।
अति रसमय सरिता सरस, बहत कुञ्ज चहुँ ओर ॥६२॥

क०—मध्य कुंज माधुरी को मंजुल मधुर अति गुंजत मधुप कोंन विधि सों संवार्‌यौ है। कुसुम सुवास सब कीनों है सुवास मय, जानों मेंन विपिन ते मथि के निकार्‌यौ है। सोभा सब सोभा की सकेलिकै सची हैं यामें मदन सदन निज सुख कों सिगार्‌यौ है। परम विचित्र सेज सुलभ संवारी न्यारी प्यारी जू तिहार्‌यौ इन आगम विचार्‌यौ है॥ ६३॥

दो०—देखहु प्रिये निहारि कें, नव निकुंज सुख रास।
ठौर ठौर वृंदा रची, नव नव भोग विलास॥६४॥
चहुँ ओर या कुंज के, शोभित चौसट द्वार।
द्वार द्वार में सहचरी, राजत परम उदार॥६५॥
मध्य माधुरी कुंज के, सरस सहेली आठ।
एक एक ही आठ हैं, होत चार और साठ॥६६॥

चौ०—आठ कुञ्ज आठन के न्यारे। नव निकुञ्ज के रचे ढिंगारे।
कहूँ भूमि मणिमय उजियारी। कहूँ कंचनकी सरस सँवारी॥
कहुँ मुक्तन के चौक बनाऐ। विद्रुम फटिक विविध रँग लाऐ॥
कौन भाँतिकी सेज बनाई। कहाँ कमल दल कोमलताई॥७०॥
निरखत तन गति रही भुलाई। मन ह्वै गये मदन मय माई॥

दो०—बन बिहरत तन श्रम भयो, नेंकु करहुँ विश्राम।
सफल होय जो आज यह, नव निकुंज सुख धाम॥७२॥
बन बिहार को सोंज सुख, सब लसत तन माँहि।
फल दल सुमन अनेक रंग, चाहत चख ललचाहि॥७३॥

स०—विहार सबै बन को तन में, जुरयौ रमि कै मम प्राणन में।
कदरी कुसुमावलि कुंदलता, विकसे अलि अम्बुज आननमें॥
शुक सारस कोक कपोत सिखी प्रगटी पिक पंचम गाननमें॥
नव बैन कुणे सुरे रंग खरे विहरें, नित काम के कानन में॥

क०—मो मन मनोरथ उठौ है आज प्यारी कछु कहत हों हा हा खैहों कहो कछु मानिये। माधवी कुसुम लै लै मंडल सकल अंग मंडित करों हों कहो मीठी मृदु बानिये। आपन पौढ़िये परयंक हों पलेटों पांय, मन बच क्रम कछु और जी न ठानिये। मेरो मन सेवा को सदा हीं ललचात रहै मो कों कोई अपनी सहेली करि जानिये॥ ७५॥

सो०—बनि कुसुम बहुत भाँति, नागरि के आगे धरे।
देखि लाल ललचात, चित्यौ भरि अनुराग सों॥७६॥

स०—माधव मंदिर में मन मोहन मंडित केलि मनोज मईरी।
कुसुमावलि कामिन की कवरी कल ग्रन्थित भाँवति भात नई री।
पटसों लखि पोंछ महा न टरी घट में घट भेद की बात ठई री।
मुख सोहै करै कर टार धरै फिर सोहै करै रति रंग रई री॥७७

दो०—करें मनोरथ पीय के, जो कछु उपजै जीय।
पौढ़ी प्रिया उछंग में, पांय पलोटत पीय॥ ७८॥

क०—नयो नेह नई रुचि नवल समागम में, नई नई बाते नव नागरी बतावहीं। चरण पलोटि चूमि नैंनन सों छूय छूय पलकन पोंछि पोंछि हिये सों लगावहीं। अंगुरी परसि कर परसि

हिये की हार उर को परसि प्यारी रस ढरकावहीं। ज्योंहीं ज्योंही देखे रुचि नवल किशोर जू की त्यों ही त्योंही मोंहन जू मन लिये आवहीं ॥ ७६ ॥

दो०—जेही रस प्यारी चलत, पिय तिहि चलति सुभाय।
प्रिया सरस रस ढारहीं, रस बातन बतराय ॥८०॥

क०—सोंधों लै सुगंध अंग बसन बनावत हैं, नाना रस रसनि के रहसि उठावहीं। इत उत कीनि कछु घातन मिलाय आनि, नवल किशोरी जू को बातन हंसावहीं। पोंछत कपोलन में पीक जो लगो है लाल, लै लै कर बार बार दर्पन दिखावहीं। मनके सयानन को और कछु आवत न जानन सों स्यान स्यान कहाँ लों जनावहीं ॥ ८१ ॥

दो०—पीय प्रिया के परसि कों, कपट करत बहु भाँति।
जो उपजत इन के हिये, जानि पहिल ही जात ॥ ८२ ॥

क०—कंचुकी कसन मिस रसन सिथिल करि, बसन सुधारे मुख हसनि दुरावहीं। अंग अंग भूषन सिंगारत हैं बार बार बैनी की बानिक नाना भाँतिन बनावहीं। बेसर के मोती परस करें सरस रस, रसिक रसीली जू को रसन रसावहीं। जानी सब मन की कहानी मन मोंहन की, रानी आना कानी कीये बानी मुसकावहीं ॥ ८३ ॥

दो०—वे प्रवीण चौंसठ कला, ये चौंसठ सत कोटि।
पीय पाद बत लगत नहीं, प्रिया रूप की जोटि ॥ ८४ ॥

क०—प्रथम हीं रूप कर देत न करन आगे, जतन करत पै

कछु न बनि आवहीं। आगे एक बामता सहेली सावधान रहै, सुरत के समें प्रवैश हू नहीं पावहीं। चातुरी चमूको कहूँ ओर छोर पावत न मोंहन इकलो मन कहाँ लों चलावहीं। हाहा एक हितु हरी आपनों सहाय कियौ, तोहि पै बनेगी पग माथो जाय नावहीं ॥ ८५ ॥

कछु न बसाय तब जाय गहि रहे पाँय, प्यारी जीय जान्यौ पिय परम प्रवीन हैं। बैनन न बोली हंसि नेंनन जनायो कहि मैन पुरिते निदेश सैनन सों दीनों हैं। इनके निदेस मानि काहू की न कीनी कानि, मान गढ़ बढ़्यौ आनि बासो अति लीनों हैं। जे जे प्रतिकूल अंग कीने अनुकूल संग खंडि के पसाय मंडि कैसो गंड कीनौ है ॥ ८६ ॥

दो०—प्रिया देस तन आज सों, अकर बसायौ मेंन।
जब सर लाग्यौ काम कौ, कुटिल भई सब सेंन ॥ ८७ ॥

क०—करके लगे ते ठौर ठौर कलमलि उठि काम के मिलन को न कोऊ ढिग आयौ है। ढीट ह्वै गए हैं लोग कानि कछु मानत है तब मनमथ मन अधिक रिसायौ है। कोऊ खंड कोऊ दंड बंधन सो बाँधि राखे नृपति अनंग बल आपनौ जनायौ है। काहू सों मिलाप कीनौ काहू कों तमोल दीनौ कोऊ बाँह बोलि बास सुबस बसायौ है ॥ ८८ ॥

दो०—निपट बाम गढ़ प्रिया तन केहि विधि कियौ प्रवेश।
अकर देश पकर कर सो, बढ्यौ अनंग नरेश ॥ ८९ ॥

क०—माधुरी निकुंज मनमथ राज मेंन पुरी देस सुख बसो

है जू सदाई सुवास सों। वन उपवन औ सुमन नाना भांतिन के रच्यौ है मदन निज सदन हुलास सों। नाना रस वरन वरन नाना रंगन के नाना विधि केलि केलि कीजै सुख रासस्रों। मोहन विलासी निज करहु विलास रस टरहु न सहचरी कहूँ ढिग पास सों॥ ६०॥

दो०—बन बिहार रस माधुरी, सहज परै जेहि कांनि।
श्री वृन्दावन केलि बिन, ताहि चैन नहिं आनि॥ ६१॥
जो गावहिं सुमरहिं सदा, मन बच विपिन विलास।
ते पावहिं सुख सहज ही, श्री वृन्दावन बास॥ ६२॥
जो लालच कोटिक मिलै, तौ न चित्त ललचाय।
तजि वृन्दावन माधुरी, सुपने अनत न जाय॥ ६३॥

❀ इति श्री वृन्दावन माधुरी समाप्त ❀

अथ दान माधुरी

दो०—निशिदिन चित चिन्तत रहों, श्री चैतन्य सरूप।
वृन्दावन रस माधुरी, सदा सनातन रूप॥ १॥
गयौ तिमिर तन को सबै, निरखत विपिन विलास।
दान केलि ससि कौमुदी, कीनी किरन प्रकाश॥ २॥

क०—वरसा की ऋतु वरसाने ते चली है विचित्र गति, वृष भानु नंदनी वन वनि को। सांकरी खोर की ओर जहां बैठे चित चोर हरिन से नैंना हरि के मन हरन को। सरस सुढार

सार हार गज मोतिन के किये हैं सिंगार तन वरन वरन को। चंचल चपल चपला के भ्रम चौंकि परै चाहि चक चौंधी लागे मोंहन के मन को ॥ ३ ॥

दो०—बोले सुबल सु सांवरे, कही कान कछु बात।
कामिनि लीने कोटि शत, को दामिन सी जात ॥ ४ ॥

क०—घेरो आन नीको सब सखन सों सांवरे हो, नेकु फिर हेरौ कित जात ऐसी साज की। नवल किशोरी गोरी थोरी वैश भोरी सब तिनहुँ में मानों एक मूरति है लाज की। बैठे घाट दानी छाड़ दिये जात आना कानि जानि न सयानी कोऊ आपते हूँ काज को। निपट प्रचंड बन करत अखंड केलि सुरति है तुम्हैं कछु मन्मथ के राज की ॥ ५ ॥

दो०—ललिता बोली लाल सों, लोइन कछुक रिसाय।
जो तुम घट दानी भये, तो दैहैं दान चुकाय ॥ ६ ॥

क०—कोंन मनमथ कोंन तुम कहा जानें हम, ऐसी ऐसी बातें कोंन गुरू के सिखाये हौ। भली भई तादिन ते आज सुधि लीने मोहिं चीर हरि तीर के कदंव परछाये हौ। अब कित जैहो दान उलटो ही दैहौ कछु ते न हम होंहि जिन बन-ठन आये हौ। भूषन बसन सखन समेत आजु लैहों तन छोर चोर नीकी भांति तुम पाये हौं ॥ ७ ॥

सो०—हम कीने सब चोर, आपुन साधु कहावहीं।
आयो जुग को ओर, अबला सबल मई भई ॥ ८ ॥

साधु होंहि नहि चोर, चोर साधु कबहूँ न भऐ।
चीर हरन की ठौर, जानत हैं सब साधुता॥ ६॥

क०—बोले मन मोहन दुहाई मनमथ जू की, सब ग्रंथ लैहो पंथ तैसे अनुसारि हों। पेंड़े हू की कहे एतो ऐंड़ो बेंड़ो होत जात, काहे को डरावो डराये ते लों न डरिहों। वन के सुमन फल राखे तन में दुराय, मेरो मन जाने कहि कहां लों उचरिहों। सवनि उघारि देखौ साधु और चोरन के आज निर वारो सब नीकी भांति करि हों॥ १०॥

क०—घर में न कोऊ जाको वसन उघार देखो, जो पै कछु अब ही ते मन ललचायौ है। भली कीनी आज ही जगाति न को रूप धर्‌यौ, कालि ही तो नंदगांव वांह दै वसायौ है॥ नाम लेत वन कौ न लाज कछु आवति है, वृन्दावन राधा जू को वेदन में गायौ है, फल फूल रूखन की जाय रखवारी करौ, कोऊ बाग बाबा जू ने विसाले लगायौ है॥ ११॥

दो०—अवलों हों चुप ह्वै रह्यौ, अब तो रह्यौ न जाय।
एक एक ते टेक यह, लेंहों दान चुकाय॥१२॥
कहूँ करौ जो करि सकौ, तोहि बबा की आन।
नीकै दान चुकाय हौं, पै न कुबास की कानि॥१३॥

क०—भली भई आपने बसाए हू की कानि करो पीठ दिये जात कित ढीटनि सों भेटिये। प्रथमहिं घाट आय बैठे हों शपथ मोहि, आजु तो सकारें ही ते नाटि मेरी मेटिये। वोहनी की वार वार कीजिये न कोई आज, बड़े ही सकारे

काहू भले सों सहेटिये। थोरौ ही सौ दीजै अरु कछु मनुहार कीजै, घाट घट वारे न सों काहे को खखेटिये॥ १४॥

क०—जो पै कछु वस है तो खखेटे को अंगेठो करौ, वेद हो सहेटो आनि बड़े घटवार सों। भये हो सपूत अति पूत ब्रज-पति जू के नेंक न डरत कुल ढरन की ढारसों॥ दैहों न गिन के मनि मानिक अनेक धन, जननी की गोद भर राखि को संभारि सों। धरिबे कौं सोंज बड़ो मटुका गढ़ाय लीजो, कहि कै पठैयो काहू कुल के कुम्हार सों॥ १५॥

दो०—ज्यों ज्यों हम इन सों डरें, त्यों त्यों अति इत रात।
लेहु मटुकिया सीस ते, रोको मारग जात॥ १६॥
ऐसे कोऊ नहिं सुनी, जो रोकै मग मांहि।
सपने हू नहिं छुई सकै, कोउ कुवरि की छांहि॥ १७॥

क०— छांह तो न छुईहों गहि बांह कुंज भवन में राज मन-मथ जू को आगे अनुसारि हों। वरन वरन फल फूल के हरन किये हीरा मनि मोतिन के हार सब हारि हों। वाहुन-सों बांधि साधि कुसुम कोदंड सर होंहु न उदंड फिर ऐसे दंड धारि हों। जैसें जैसें मन्मथ नरेश जू निदेस दैहैं तैसें तैसें रसना सिथिल पान करिहों॥ १८॥

क०—घर ही में गढ़ि गढ़ि वातन के ढेरि करौ, जो जो मन उपजै सांझ और सवेरे को। ऐसी है न कोऊ कैसी जैसी तुम चाहति हो, एक एक सरस है उतर तिहारी को। तो लो है कुशल जौ लों सूधी सब चाहति है फिर तेरे हाथ कछु आवत

न पारे कों। अब ही तो गंडन पै पांड को वरन भयो ऐसौ मुख दीखत है दंड दैन हारे को॥ १६॥

सो०—उपजत है जिय मांहि, इन गंडन पै खंडिता।
जाने सोई जान जाकी प्रीति प्रगट भई॥ २०॥
यह तो निपट अनीति, पय प्यावत तन को डसे।
करि कारे सों प्रीति बहुरि निवाहो होय क्यों॥ २१॥

क—कारे ही तो निपट तिहारे प्यारी देखियत भूषन बसन हेरि हिये कोंधि जात है। बन बन डोलति हो देखत न वन सुख बोलत कलि कोकिला श्रवन सिरात है। खंजन से नैनन में अंजन विराजै कारौ पटतर देत कछु और न समात है। प्रान हूते प्यारे कारे तन में उजारे कारे आँखिन के तारे करि टारे कहुँ जात हैं॥ २२॥

क०—आँखिन दिखाय तुम आँखिन के तारे भऐ मन बच करि अब कारेन सों डरिये। कपटी कुटिल डीठ जहाँ लों कठोर सब पट तर दैवे को न और सम करिये। कारे न सो कारे विधि एई पै संवारे अब इनके ढिंगार ह्वै कै नेंकु न निकरिये। बासते बिचारेहू जो एक ही बासक दीजै कारे बिसहारे से बचाय पाँव धरिये॥ २३॥

सो०—जो पै मन उर झाय, तो पाँय बचाय क्यों चलै।
तन हरूवो चल जाय, मन गरूवो कैसें चलै॥ २४॥
मन तौ गरूवो आहि, पै लैन हार से जायगौ।
कारे उसे न ताहि, द्वै मन गौरी लै चली॥ २५॥

क०—दामिनी को मन अब कैसें कै निकार्‌यो जात, अरूझे हैं काहूँ भाँति करि नव घन सों। नलिनी की हिलग परी है अब अलिन सों चलिन न देत रोकि राखे है दलन सों। कनकलता की प्रीति कैसे कहि परत है कोंन भाँति लपटी तमाल श्याम-तन सों। कारे और गौरे को संजोग बनि आयो अब अन बन होत क्यों विधाता के बरन सों॥ २६॥

क०—ठाली है न कोऊ बैठे बौठया उठायो करौ तुम ही तो दिन बहरावो टारा टोरी सों। हमें तो आय वो दिन दिन यहि मार्ग अहो दूध दही-भरे लीने कनक कमोरी सों। अपरस ऐवो कुंज देवी दरसन हित परसजु कीनो काहु नवल किशोरी सों। निकसेगी ऐंड़ बेंड़ रोस सब द्यौसन की छूटि हैं न बाँधे फिर दीनी दाम डोरी सों॥ २७॥

दो०—समझि न बोलति हो कछु, डोलति हो कछु ढीठ।
फेर न ऐसी कीजिये, आज बची हो नीठ॥ २८॥
हम यह तो मारग चली, करो कोउ कछु आय।
अपने मदन नरेश कौ, देउ बनीती जाय॥ २९॥

क०—नवल कुँवर अलबेलो अलबेली भाँति, लाल हीं लकुट लैकें रोको मग आनिकै। जाँनि कैसे पैहौ अब आनि मनमथ जू की बहुत बचे हो कछु और जिय जानिकै। सखन सो बोले सब खोरि तुम रोकौ जाय जैसे कोऊ निकसै न दीने बिनु दान कै। प्यारी जूको पानि गहि हंसि बोले प्रानपति सदन तो जैहो सुख मदन सों मानि कै॥ ३०॥

क०—प्यारे के परस होत उरज्यौ सरस रस स्वरभंग वेपथ

प्रस्वेद अंग ढरक्यौ। हरष सों फूल्यौ तन तरकी कंचुकी तनि चखन चलत सों सिंगार हार सरक्यौ। कंकन किंकिणी कटि नीवीहूँ सिथिल भये लोचन कपोल भुज वाम उर फरक्यौ। चिबुक उठाय कै जु ऊंचै तब कीनों मुख धीरज न रह धरधर हीयो धरिक्यौ॥ ३१॥

क०—प्रेम बस जानि प्यारी नवल किशोरी गोरी कर गहि लाये कुंज माधुरी भवन में। विविध सरोजन की सेज रुचि रुचि राखी त्रिविध बहत सुख सीतल पवन में। अंग अंग गोरी को सरस अति गौरस ते मथ रस लीनो मृदु माखन कवन में। सबनिसो कह्यौ तुम सौरभ सुगंधि लाओ आप रस बस भऐ रसिक रमन में॥ ३२॥

क०—माधुरी लता में अति मधुर विलासन की मधुकर आनि लपटानी सब सखियाँ। दुलहिन दूलहू के फूल के विलास कछु वास लै लै जीवति हैं जैसे मधु मखियाँ। ऐसे दाव बार बार माँगत विधाता जू पै, कुंज केलि माधुरी में कीजे जल झखियाँ। दान मिस आँनि कछु दंपति को सुख भयो एसो दिन दिन देखों सुख मेरी अंखिया॥ ३३॥

दो—सुनै सुनावे जो कोऊ, दान माधुरी रूप।
मन वाँछित फल दुहुन को निरखै सदा सरूप॥ ३४॥
दानकेलि जो मन वसे, ताहि न और सुहाय।
तजि वृन्दावन माधुरी, अंत कहूँ नहीं जाय॥ ३६॥

❀ इति दान माधुरी समाप्त ❀

अथ मान माधुरी

दो०—कृष्ण रूप चैतन्य घन, तन शत मुकुर प्रकाश।
सदा सनातन एक रस, विहरत विपिन विलास॥ १॥
एकसमें रस रास में, रसिक रसीली संग।
दामिनि ज्यों दमके दुरै, प्रिया पीय के अंक॥ २॥
निरखत निज प्रतिबिंब तन, मन संभ्रम में आनि।
उठनि उठी मन मान की, और त्रिया संग जानि॥ ३॥
चपल चली तेहि ठौरते, कीनो कठिन सुभाय।
बैठी रही रिसाय कै, गरव सिंहासन छाय॥ ४॥

स०—ठाड़े रहैं इकसे जकसें न कहें कछु काहु खरे रुचि जैसे।
तोलों कहूँ निरखे ललिता तव पूँछति आज कहाँ कुचितैसे॥
लाइहों जाय लिवाय मनाय हँसाय खिलाय करो सुचितैसे।
नेकु लों धीर धरो मन में तव सैंन में बैंन कहै रुचि तैसे॥ ५॥
मैं तो कछू न कह्यौ उनसों उन काहे सों मान महा मन ठान्यौ।
कै कछु निर्तत रासमें काहू को मो कर सों परस्यौ कर जान्यौ॥
रंचक दोष को लेश कहूँ नहिं हों अपने हिय हरे हिरान्यौ।
मोते न चूक परी अचकैसी य तेरी सों तोते कहा कछु छान्यौ॥
कान्ह सबै कछु जानत हों तुम जैसे हो तैसे कहाँ लों बखानों।
जो कोऊ रावरे की समझै नहीं तासों बनाय के बातनि बानों।
हों हित की चित की सब जानति चातुरताएहि और सों ठानों।
और सबै है या चूक कहों नहिं जाति भले सब के मन मानों॥

जो तुम हीं यह बात कही उनसों कहि दोष कहा कहि दीजै।
तकिये जहाँ जाय सहाय को आपुन वै उलटे पर तौ कहा कीजै॥
ओर चकोर की चंद तपै तब चाह के ऐसे खरो तन छीजै।
मेरो कहा बस है तुम सों जी बसी तुम्हरे जिय तेसो ही कीजै॥
बैठि रहौ छिन मौन ह्वै मोंहन हों उनके मन की सब लाऊँ।
सोधि सबै उनकी बतियाँ पुनि सों तुम से सब आनि सुनाऊँ॥
मोहि न अंतर है उन सों कछु आनि निरंतर रंक बसाऊँ।
देहु सबै सुख तैसीय भाँति पै जो कछु बात अंकोर हों पाऊँ॥
कोंन अंकोर जो दिये तुमें सम देवे को हों चित ठाठ ठयौ हों।
जो कछु है सब सोंज तिहारी तिहारी बांह के सु छांह छयौ हों।
रास बिलास हुलास सबै रस या सुख को तुम ही ते भयो हैं॥
और कहाँलों कहों तुमसों तुम तो बिन मोलन मोल लयो हों॥

दो०—तब ललिता तेहि ठौर ते, चली चपल अकुलाय।
जहाँ लड़ैती मान कर, बैठी जतन बनाय॥ ११॥
चित चिंता चाहति धरनि, चितवत नीची नारि।
कहो सखी केह हेत ते, पहिरे पलट सिंगारि॥ १२॥

क०—मो पै न इन के अब जी की कछु जानी जात काहेते कछु न आज ऐसे मन धारयो है, अति अनबोली आज बोलहून बोले कछु आवत ही अंग नील बसन उतार्‌यौ है। फोंदा मख तूल पोती कंठ ते उतार धरी पोंछ पोंछ नैंनन ते अंजन निकार्‌यौ है। मृगमद रेखा कोऊ राखी है न उर पर बास हूँ केउ डर सुवास धोय डार्‌यौ है॥ १३॥

बन देखे मन कछु अति कल मली होत घन देखे नैनन में नीर भरि आवहीं। केकि किलकारे मृग रीस कै निकारे सह मधुकर द्वारे हूँलों आवन न पावहीं। कोकिला की बानी सुनि कांनि मूंदि बैठति हैं काहू कै कहेते मन अधिक रिसावहीं। नील कमलन देखि बिकल ह्वै जात तनु काहू सों न कहि बात मन की जनावहीं॥ १४॥

हेलिहो आज कहों कछु काहिते कोंन सों रिस कियो है यहाँ लों। नेंक सुवंक विलोकनि में सब जंगम ह्वै जड़ जात जहाँ लों। वैतु बिना रिसते सब ह्वै रहे तासों कहा अब कीजै कहाँ लों। जानति हो तुमही जो सबैबिध हों तुम सों जो कहोंगी कहाँलों॥ मानियेजू अपने मन की सब मोसों कहा गहि मौंन रही हौ। रोस तो बासों है औरनिसों रिस ऐसी कुटेब कहाँ ते गही हौ। कबहूँ जिन ताहि पत्याहु कहूँ जो कछु तुम सों इन ऐसी कही है। पीतम सों हसिये लसिये मिलि जीवन को फल सोई सही है॥ हों नहिं जाय हँसों विलसों मिलि जो मन में अनुराग नयौ है। जीवन को फल लेहु सबै मिलि जो कछु ऐसो विवेक भयौ है॥ हूँ फिर भूलि कैं कारो कहूँ न कहूँ मन में यह नैम लियौ है। खेलो हँसो सुख लेहु सबै सखि सोंजि सबै तुम ही को दियौ है॥ पहले सब सोच विचार कै देखिये तो इतनी रिस औरसों कीजे। झूंठो ही दोष लियो मन में धरि आप दुखी दुख और न दीजै॥ जो छिन जाय सो है कितहूँ फिरि ऐसी छटा छिन ही छिन छीजै। देखौ विचार विचक्षणि हो अब दावन दोष नहीं अब दीजै॥

देखहि सोंधि सम्हारि सबै गुन कारेन के न कहूँ बनि आऐ।
जा तन की उपना धन दीजत सो संग दामिनि डोले दुराऐ।
भोर भ्रमें न रमें रस काहू सों एक तजै मन एक सों लाऐ।
कालिमा कज्जल जो परसै हित छाँड़ि न ताहि कलंक लगाऐ॥
बैठि कहा कविता सी करौ सुधि है कछु साँवर के तन की।
छिन ही छिन देह की और दशा जो उठी कनिका श्रम के कन की
में तव ही तेहि भाँति तजी अबलों गति कौंन भई पिय की।
तुम तो मुख मूंदि कै मौन गह्यौ कछु जानति हो उनके मन की॥
जानति हो उन के मन की यह नैक नहीं जिय में कठिनाई।
माखन ते मृदु मेंनहु ते मृदु नेंक त्रिया निरखे ढरिजाई॥
या ब्रज में बनिता जितनी वर बानिक तो सब सो बनि आई।
जाहि मिलै मिलि जाय तिही रंग ऐसे हिऐ के हैं कोमलताई॥

सो०—प्रगट दिखाऊँ आनि, और सखी हम सी सबै।
मन माखन ढरि जाँहि, तुव मुख भानु प्रकाशते॥ २२॥

स०—बात लई इनके मन की तब लालन पै ललिता चलि आई।
सुधि होत कहूँ रिसके बस काहु कुमंत्रणि सीख सिखाई।
बैठि हुती अन बोलन बोलति में छल के बहु भाँति बुलाई।
दूर करो मनते दुख दारुण बेगि चलौ बलि देहुँ दिखाई॥२३॥

सो—चले लाल तेहि ठौर, जहाँ हठीली हठ कियौ।
कहत न मुख सों और, कर जोड़ें ठाड़े रहें॥ २४॥

स०—लालन आऐ हैं लाड़िली जू नेंक लोइन कोरन सों इन हेरौ।
नैक के मान कहा घट है गई माधुरी कुंज में मोंहन तेरो।

कीजिये सोई जो है जिय में अहो नेंक चितै नहीं होय निवेरौ।
नीचे ही चाहति चूक कहा परी ए तो सदा सखी चेरी को चेरौ।

सो०—यह ठाड़े कर जोरि, तुम न करत सोंही दृगन।
फिरि बैठी मुख मोरि, चितयौ नेंक न चाह सों॥ २६॥

क०—आये सनमुख लाल लोचन सजल कीने माला एक मल्लीकी नवल कर लीने हैं। आगे लै लै धरत करत मनुहार अति पांइन परत कर कैसे डारि दीने हैं। मोंहन मनावत उठावति चिबुक गहि जतन बनावत न सोंहै दृग कीने है। छुउ न सकात पै न रह्यौ पुनि जात जिय अति अकुलात जैसे मीन जल हीने हैं॥ २७॥

क०—अहो जू हठीली हठ छांड़ि दीजै रस कीजै दीजै लाल मिठ बोले अब बोलियत हैं। नेंकहूँ सुरति आय शोक न रहत कछु नेंक मुसिकान में सुधासो पीजियत है। जाको मुख देख सुख संपत सरस आवे ऐसे मन मोहन सों मान कीजियत है। मान की कहा है तन मन प्रान वार दीजै देखी देखी याको मुख देखी जीजियत है॥ २८॥

क०—कोंन बरजी है मुख देखि देखि जीयो करो और सब कीजिये जु कछु मन भाई है। कंठ सों लगावो बतराओ सुख पाओ जिय साँवरो सरूप तुम्हें सदा सुख दाई है। सबही सों खेलौ हंसौ देखो सुख लागत है हिये की हिलग कहा हम सों दुराई है। जानति हों सबै कछु जैसी तुमें बीतति है इनकी तिहारी बात नीकी बनि आई है॥ २९॥

क०—जैसी हम तैसी तुम नीकी भाँति जानति हौ भली बुरी प्यारी जू की पांइन की चेरी हैं। इनहूँ की बातन में सोधी कै सपथ लै लै कबहू न और त्रिया हाँसीहू में हेरी है। हों तुम कहत जोई सोई तुम मान लेउ मेरी बात कबहुँ न सुपने हू फेरी है। झूंठे ही अदोष नीकों दोष जिनि देहु कछू तेही सोंह लीनी जेई कठिन करेरी है॥ ३०॥

क०—काँख में जु चोरी मुख सों है खात होत कहा ऐसी ऐसी बातें सब कलिकी निशानी है। मेरे आगे अबही तो अंगनि दुरावति हैं मोकों यह जानति हैं ऐसी ये अयानी है। छाती सों लगाऐ डोलें छबीली कुँवर एक छल सों छिपावें छवि मोसों कहा छानी है। नैन और बैन और हिये और जिये और ठौर ठौर और जाके जी की सब जानी है॥ ३१॥

क०—नैंननि में बेंनन में तन मंन ठौर ठौर रोम रोम प्यारे जू कें तुही रमि रही है। और कौन छुइ सकें छबीली कुँवर विन नीके कें निहारि देखों मैं जु तोसों कहीं है। तेरो प्रतिबिंब तन सदा प्रति-बिंबित हैं तेरी तो हिलग में गहन कछु गही है। जो न पतियाओ तो नेंक करि परसि देखौ जानौ सब झूँठी साँची आज ही की सही है॥ ३२॥

क०—तब कछू प्यारे लाल कीनौ है जतन एक नख सिख लाल ओढ़ि लोनों पट झीनों है। तैसी ये चरन चलै मोरि चलै अगबार प्यारी जू के पांइन परस आनि कीनों है। कहा भ्रम गहि रही जानत काहू भ्रमाई उनहीं के काजे ऐसो कहा हठ

लीनों है। मन बच क्रम करि तिय तो तुम्हें ही जानो मैं तो तन मन प्रान तुमहीं को दीनों है ॥ ३३ ॥

क०—तिरछी ह्वै चाही तब संभ्रम सों मिटि गयो हँसि मुसिकाय दियो सोहै मुख करि कें। पट में न प्रीतिबिंब देख्यो निज अंगनि कों कछुक लजाय रही नीचै चख ढरिकें। किहूँ किहूँ काहू भाँति हास करि प्रानपति कर गहि प्यारी लै उठाई पांय परिकें। रसिक रसीली रस रास में सरस दोऊ अरस परस मिलि खेलें अंक भरिकें ॥ ३४ ॥

क०—माली नव मदन तरुनी तन आलबाल जतन जुगति सों जोवन बीज बोयौ है। उपज्यौ है अंकुर सनेह को सरस अति सुरति के मेह सों सुनित सरसायौ है। मूल प्रतिकूलता सुमन फूल फूलि रह्यौ हाव-भाव पल्लव सघन छाँह छायौ है। मधुरते मधुर लग्यौ है एक मान फल सोई जाने सुख जिन लोभी रस लयौ है ॥३५॥

सो०—बिन सनेह नहिं मान, मान बिना न सनेह कछु।
जैसे रस मिष्ठान्न, नोंन सहित रोचक अधिक ॥३६॥
जैसो जहाँ सनेह, मान तहाँ तैसो बनें।
ज्यौं बरषे नित मेह, सोखन शूर प्रकाश बिन ॥३७॥
मिश्री मान समान, छूवत कर लागत कठिन।
जब कीजै रस पान, तब जानै रसना सरस ॥३८॥

दो०—नव रस सब नीरस लगे, सब रस को सिर मौर।
मान माधुरी रस बिना, मन न रसै रस और ॥३९॥

मान माधुरी जो सुनें, होय सुबुद्धि प्रकास।
प्रेम भक्ति पावै विमल, अरु वृन्दावन वास ॥४०॥
मान माधुरी जो पढ़ै, सुने सरस चितलाय।
राग मार्ग में चित रहै, राधाकृष्ण सहाय ॥४१॥

❀ इति श्री मान माधुरी समाप्त ❀

अथ होरी माधुरी

राग धनाश्री

हो हो होरी बोलहीं नवल कुँवर मिलि खेलैं फाग।
आगम सुनि ऋतुराज को उपज्यो मन में अति अनुराग ॥
बरस दिवस लागी रहै या सुख की आसा जिय माँहि।
जो क्यों हूँ विधिना रचै सबै द्यौस होरी है जाँहि ॥ २ ॥
अति हुलास हिय में बढ्यो अब कापै यह रोक्यौ जाय।
उँमगि चल्यो रस सिंधु ज्यों अपनी मर्य्यादा विसराय ॥
सुबल सुबाहु सखा सबै जोर लियो निज संग समाज।
अपने अपने घरन ते निकसे कर खेलन के साज ॥ ४ ॥
एक सखा हो हो करै एक करै कछु उलटि रीत।
मधु मंगल नाचत चलै गावत हैं होरी के गीत ॥ ५ ॥
एक दिगम्बर रूप धरे नख सिखं अंग विभूत चढ़ाय।
एक कोउ कामिनी भई चले दुहुँन की गांठ जुराइ ॥ ६ ॥
ताल पखावज बाजहीं बाजत रुँज मुरज सह नाइ।
दफ दुन्दुभी अरु झालरी रह्यो कुलाहल सब ब्रज छाइ ॥

सैनन ही में साँवरे कह्यो सबनि सों यों समुझाय ।
आज भैया या साज सों खेलें बरषाने में जाय ॥ ८ ॥
आये बट संकेत में तब कीनी मुरली की घोर ।
श्रवन सुनत प्यारी राधिका चौंकि परी चित रह्यौ न ठौरि ॥
निकसीं संग समाज लें खेलन को सब साज बनाय ।
पावस की सरिता मानों उमँगी रस सागर को धाँय ॥१०॥
एकन कर गेंदुक सोहै एकन नवला सी बहु रंग ।
झुंडनि मिलि गावत चली झोरिन भरी गुलाल सुरंग ॥
सुरमंडल और सारंगी बीना बहु संग ।
मधुर मधुर सुर बाजहीं मदन भेरी डफ चंग उपंग ॥१२॥
आइ प्रिया पहुँची जहाँ खेलत नन्दकिशोर ।
मानों समर संकेत में रुपै सुभट सन्मुख दोऊ ओर ॥
विविध भाँति फूलन गुही पहिले गेंदुक दई चलाइ ।
मानों रस संग्राम की आगे दई बसीठ पठाइ ॥
पिय पिचकारी पुरि कै दई प्रिया ऊर ऊपरि तानि ।
अगर अरगजा घोरि के मुख सों-धो लिपटाइ सानि ॥
छिरकत चहुँ ओरतें मनहु मेघ उमडे हु जलरास ।
गौर घटा अरु साँवरी वर्षत केसर नीर सुवास ॥
सब सखियन ढिग श्याम के दीनों लाल गुलाल उड़ाय ।
दुरि पाछे ह्वै घात सों गहे कुँवर मन मोहन आय ॥
एकन कर गाढी गही एक बनावत चित्र कपोल ।
एक निडर आँजन लगीं नैन कमल दल परम सलोल ॥

इक सन्मुख मुख चाह हीं एक कहत करि चिबुक उठाय।
बहुत दिनन ते आज ही अब बस परे हमारे आय॥
बहुत कहावत हो आपुन कों आज बदौ जो जाह छुडाय।
एक बैंननि गारी गावै एक कहत सैंननि मुसिकाय॥
दए सखिन मिलि श्याम के केसरि कलस सीस ते ढ़ारि।
एकन चुरली हरि लई एकन मोतिन माल उतार॥
नव केसरि मुख माँडिकें इक नाचत हैं दै दै करताल।
कजरा आँखिन सारि कै हँसि बोली इक सुंदर बाल॥
एकन गहि बेनी गुही एकन मोतिन माँग सँवारि।
उरजन पर कंचुकी कसी तापर मोतिन माल सुढ़ारि॥
तन सुख की सारी अति झीनी अरु लीनी सोंधे सों सानि।
अगर अरगजा बोरि के पहिरावत प्रीतम को आनि॥
नूपुर कंकण किंकिणी नख सिख भूषण साज शृंगार।
सो सुख देखे हीं बने अद्भुत सोभा बढ़ी अपार॥
कर पकर धरि लै चली बैठारी प्यारी ढिग जाय।
आई नई यह सहचरी चाहत है देखन को पाँय॥
अति प्रवीन गुण आगरी वीणा बजावत परम अनूप।
सेवा अंग सिंगार में सुघर सखी साँवरी स्वरूप॥
उत्कंठा तुम मिलन कों लागि रहत याके जिय माँहि।
हँसि भेटहुँ दोउ अंक भरि जैसे तन मन नैन सिराइ॥
अति आनन्द हुलास तें मिलि सखी दोऊ भरी अंकवारी।
जब जान्यो यह भेद कछू तबहिं सकुचि मुसकाइ निहारी॥

जो आनंद उर में बाढ्यों एक रसना वरनों नहिं जाय।
दिन दिन यह सुख दुहँन को निरखि माधुरी नेंन सिराय॥

पद

अति सरस रच्यो वरषानो जू। राजत रमणी कर बानों जू।
जहाँ मणिमय मन्दिर सोहै जू। उपमा कौं रवि शशि कोहैं जू॥
नित होति कुलाहल भारी जू। मन मुदित सकल नर नारी जू॥
वृषभानु गोप जहाँ राजे जू। कीरत जाके जग गाजे जू॥
जब दिन होरी को आयौ जू। न्योंतो नंदगाँव पठायो जू॥
सुनि कें मन मोहन धाये जू। सब सखा संग लिये आये जू॥
श्री जसुमति न्योंति बुलाई जू। समधि समधानें आई जू॥
कीरति आगे हू लीनी जू। मनुहारि बहुत विधि कीनी जू॥
आवो निज भवन विराजो जू। वरषानों सकल निवाजौ जू॥
अति कृपा अनुग्रह कीने जू। हम तो अपनें कर लीनें जू॥१०॥
तुम तौ सब की सुखदाई जू। मुख कीजे कौन बड़ाई जू॥
तुम तो यह निज व्रत लीनों जू। जिन जोई जाच्यो सोई दीनों जू॥
यह जस तुम्हरो जग जानै जू। इहि सुख कवि कौन वखाने जू॥
जब कर गहि ढिग बैठारी जू। गावैं गारी ब्रजनारी जू॥
तुमको बूझें एक बाता जू। तुम साँची कह यह गाथा जू॥
जब गरग तिहारे आये जू। बहु नाम कृष्ण गुण गाये जू॥
सुनि वासुदेव करि लेखे जू। वसुदेव कहाँ तुम देखे जू॥
यह सुनि सुनि बात तिहारी जू। अचरज उपजत जिय भारी जू॥
औरों शंका जी आदे जू। यह भेद न कोऊ पावै जू॥

अति साधु परम तुम पायौ जू। यह पूत कहाँ ते जायो जू॥
याके गुन रूप निहारे जू। यह मिलें न कुलहि तिहारे जू॥
हम सों सब लाज निवारो जू। ऊँचे ह्वै क्यों न निहारौ जू॥
कछु कह्यौ हमारौ कीजै जू। हँसि कैं सब को सुख दीजै जू॥
रहिये कछु द्यौस हमारे जू। हम तौ हैं सकल तिहारे जू॥
तुम दोउ एकहि कर जानों जू। नंदगाँव सोई बरषानों जू॥
जैसे कछू नंदहि मानों जू। तैसे बृषभानों हि जानौ जू॥
दोउ हैं परम सनेही जू। ये एक प्राण द्वै देही जू॥
तब हँसी सकल ब्रजवाला जू। मुसके कछू नंद के लाला जू॥
सुन सुन जशुदा मुसकानी जू। बोली कछू मधुरी बानी जू॥
बसहिं कछु द्यौस तिहारे जू। कीरत चाल बसहु हमारे जू॥
तब हँसि सकल वृजनारी जू। जशुमति की ओर निहारी जू॥
वृज भयो कुलाहल भारी जू। नाचैंहिं दै दै करतारी जू॥
यह रस बरसे बरषानें जू। बिन कुँवरि कृपा को जानें जू॥
कीरति जशुमति जशु गायौ जू। वृजवास माधुरी पायौ जू॥

विलावत

आगम सुन ऋतुराज कों फूली सब वृजनारी जू।
बरन बरन सिंगार कैं तन चंदन चरचित सारी जू॥ १॥
केसर चंदन वन्दना अरु घसि लीनी रोरी जू।
नव नवला सी फूल की लियें फूल भरि झोरी जू॥ २॥
मंगल साजु सबैं लियें सब निकट कुँवर के आई जू।
प्रथमहि दिवस बसंत कों मन हर्षित देत बधाई जू॥

गावै गीत सुहामनें मन हर्षित नवल किशोरी जू।
सब वृज कुशल समाज सों फिर आई फागुन होरी जू॥
ताल मृदंग मिलि बाजहिं रुँज मुरज सहनाई जू।
डफ दुंदुभी अरु झालरी मानों बाजत मदन बधाई जू॥
सुन सुन घोष कुलाहलै जिय मन सब कौ सरसान्यौं जू।
गिरिधर के अनुराग सों रंग भीज रह्यौ वरषानों जू॥
इहि विधि साज समाज लै सब चली राय जी की पौरी जू।
श्री राधा जी के लैंन कों हँसि उठि नंदरानी दौरी जू॥
प्रथम हि केसर नीर ले अंग चीर सबै रंग बौरे जू।
मृगमद अरगजा घोर कें शिर भरि भरि गडुया बोरे जू॥
सोंधो सुरंग गुलाल सों वहु सखि जवाद मिलाए जू।
दौरु अचानक लाडिली हँसि महरि वहन लपटाये जू॥
छिरक्यो सब मिलि धाय कै तब छलवल सों उठ दौरी जू।
जान कुँवरि वृषभानु की तब महरि लई भर कौरी जू॥
चुँवत चापति प्रेम सों हँसि पुन पुंन कंठ लगावैं जू।
जो कछु आनंद जिय कों मुख कहत कह्यौ न आवें जू॥
तव मन महि नाना भाँति कै वहु भूषण वसन मँगाये जू।
तौ इन कों हम लेहिं जो कहो गिरिधर कहाँ दुराये जू॥
कछु उँचहिं चख चाहँ कें महरि वदन मुसकानी जू।
नागरी सव गुण आगरी वात हिये की जानी जू॥
सब जुवती जानि धाय कें तव जाय चढ़ी चित्र सारी जू।
सकुचत वदन दुरावहीं हँस गहै जाय गिरधारी जू॥

घेर लिये चहुँ और ते अब छूट हुँ कहाँ पलानें जू।
क्यों जुवतिन के वस परे कहियत अधिक सयाने जू॥
कोउ कातें भेद की कहि कानन में उठ दौरी जू।
कोउ अचानक आय कें तब लाल लये भर कौरी जू॥
काहु नाना भाँति कै रच चित्र कपोलन कीनौं जू।
काहू मरवट माँडि कें मधि बेंदा रोरी दीनों जू॥
काहु नीकी भाँति सों अंजन नैंन बनायौ जू।
एक सहज हीं चपल कुरंग से अरु ठरक श्रवन लौं आयौ जू।
काहू गहि गुँथी बैनी रच मोतिन मांग सँवारे जू।
तन सुख की सौंधे भीनी मुठि सरस बनाई सारी जू॥
चम्पकलता चल आय के जब चिबुक दिठौना दीनौं जू।
मोहि रहीं सब मोहनी जब रूप मोहनी कीनौं जू॥
तब नाना वरण अबीर लै दुरि मोहन बदन लगावें जू।
पूरण चन्द मनों घन में नव इन्द्र धनुष सो छावै जू॥
केसर ढ़ोरी सीस तें भूमि ढ़रि ढ़रि चले पनारे जू।
सौधें सुरंग गुलाल सों सब भरे घरनि के द्वारे जू॥
सन्मुख मुखहि निहार कें सुख निरखत कोउ न अघानी जू।
गावहिं गारी सुहावनी अति रस सों लपटानी जू॥
तब आगे गहि मोहिनि हिं हँसत हँसत तहाँ आई जू।
घूँघट सो पट ढ़ापि कें पगनि महरि के लाई जू॥
यह कन्या काहु राय की तिन आय समरपन कीनी जू।
रूप वैस गुण श्याम के जोट विधाता दीनी जू॥

हर्षित मन आनंद सो तुम बाँटहु आजु बधाई जू।
विधिते रूप उजागरी हम कान्ह बधू लै आई जू॥
विहंसि बधू को नाम सुनि तब महरि गोद बैठारी जू।
प्रमुदित अति आनंद सों कछु विधि तन गोद पसारी जू॥
अंचल ओट पसार कें कछू मुख चुँवत मुसक्यानी जू।
हँसि परसपर नागरी तब देखत महरि लजानी जू॥
हो हो होरी बोलहीं नाचत दै करतारी जू।
प्रमुदित करत कुलाहल गावत सब ब्रजनारी जू॥
यह ब्रज होरी खेल कों सब सुख ते सुख न्यारो ज।
यह समाज नित माधुरी कें नेंक उरतें नहिं टारी जू॥३०॥

राग काफी

हो हो होरी बोलें॥ ध्रु०॥
फगुवा मिस ब्रज सुंदरी जसुमति गृह आई।
गावत गारि सुहावनी सब के मन भाई॥
तब ब्रजरानी बोल कें रावर में लीनी।
मुसकि मुसकि कें कहत हें बतियाँ रंग भीनी॥
अहो जसुमति भोर ही हम नोतें आँई।
आज कछू वृषभान जी तुम बोलि पठाई॥
और तुम सों कछु कह्यो है संदेश जु न्यारो।
कन्या हमारी राधिका हरि पति तिहारो॥
मन वच क्रम करि कहत हें हम सोंह तिहारी।
तुम लागत हम को सदा प्रानन ते प्यारी॥

भर होरी के दिन सबै बरसानें रहिये।
समुझत हो तुम ही सबै तुम सों कहा कहिये॥
जो तुम सों कछु कहत हैं विनती कर मानों।
वरसानो नंदगाम कों एक ही कर जानों॥
व्रजवासिन विनती करी सोहू सुनि लीजै।
तुम सुखदाई सवन की हम हू सुख दीजै॥
तब जसोमति मुसिक्याय कें बोली मृदुवानी।
जो कछु हम सों कहत हो हम सो सब जानी॥
एक सन्देशो जाय कें कीरति सो कहियो।
नंदराय ढिंग आय के कोऊ दिन रहियो॥ १०॥
हँसी सकल व्रजवासिनी नाचत दे तारी।
समझ समझ मुसिकें कछू ठाडे गिरिधारी॥
केसर कलस भराय कें सब पर वरषाये।
मृगमद केसर घोरि के मुख पर लपटायें॥
मन भायो फगुवा लीयो तनसुख की सारी।
अंक माल सब के हिये दीनी ढुरि न्यारी॥
खेल बढ्यौ अति चोगुनों आनंद भयो भारी।
फागुन कियो सुहावनो हरि सों व्रजनारी॥
अरस परस रस जो बढ्यो कछु कहत न आवे।
दिन दिन या सुख माधुरी निरखे और गावे॥

राग काफी

बोले सब हो हो होरी। खेले श्री राधा गोरी॥ १॥

सहेली संग सुहाई। बनी सब एकई दाँई॥ २॥
भरी केसर घोरि कमोरी। लाल के शीश ते ढोरी॥
सोंधो बहुत मँगायो। प्यारी जु के अंग लगायो॥
बाजे डफ ताल मृदंगा। बीना मुख चंग उपंगा॥
भरे फेंटन माँझ गुलाला। आये उत नंद के लाला॥
सबे मिलि घात सों आई। लालन कों घेर के लाई॥
भरी रसदृष्टि निहारे। छुटै अनुराग के धारें॥
गारी रस भेद की गावें। तारी दे लाल नचावें॥
सहेली के भेष बनायो। माधुरी के मन को भायो॥

राग सारंग

करतारी दै दै नाच ही बोलें सब हो होरी हो॥ टेक॥
संग लिए बहु सहचरी वृषभानु दुलारी हो।
गावत आवत साज सों उमते गिरिधारी हो॥ १॥
दोऊ प्रेम आनंद में उमगे अति भारी हो।
चितवनि भरि अनुराग की छुटै पिचकारी हो॥२॥
मृदंग ताल दृफ बाजहीं उपजै गति न्यारी हो।
भूमिकै चैतब गावही दै मीठी गारी हो॥ ३॥
लाल गुलाल उड़ावही सौंधों सुखकारी हो।
लाड़िली मुख लपटावही मेरो ललन बिहारी हो॥
हरै हरै आई दुरी करि अबीर अंध्यारी हो।
घेरि ले गई श्याम को भरि के अंकवारी हो॥
काहू गहि वेनी गुही काहू माँग सँवारी हो।

काहू अंजन सों आंजी अंखिया अन्यारी हो ॥ ६ ॥
कोऊ सौधें सौं सनी पहिरावत सारी हो ।
करते वंशी हरि लई हँसि कै सुकुवाँरी हो ॥ ७ ॥
तब ललिता मिलिके कछू इक बात विचारी हो ।
प्रिया बसन पिय को दये पिय के दये प्यारी हो ॥८॥
मृगमद केशरि घोरि के नखसिख ते डारी हो ।
हटि कै गँठजोरौ कियो हँसि मुसकी निहारी हो ॥
याही रस निवहो सदा यह केलि तिहारी हो ।
निरखि माधुरी सहचरी छवि पै वलिहारी हो ॥१०॥

❀ इति होरी माधुरी ❀

अथ प्रियाजू की बधाई

❀ आसावरी ❀

आजु हियें आनन्द न समाई ।
श्री वृषभानुराय के मंदिर राधा रसनिधि प्रगटी आई ।
मुदित भये तन तरु-वल्ली सब वृन्दावन कुसुमित बहुताई ॥
सारस हंस कोकिल कूजत नाचत मोर मधुर सुर गाई ।
जसुमति सुनत परम हरसित भई अपनों सर्वस दीयो लुटाई ॥
बाजत गावत नंदीसुर ते चले नंद मन में मुसिकाई ।
मंगल सोंज लिये घर घर तैं बहुविध मंगल कलस भराई ॥
मंगल दीप दूव दधि मंगल मंगल थार विचित्र बनाई ।

आनि जुरे वृषभानु पौरि में दौरि मिले सन्मुख सब जाई।
गोपी-गोप प्रेम अति आतुर रहत परसपर गर लपटाई॥
दुंदुभि झाँझ मृदंग झालरी आवज रूँज मुरज सहनाई।
छिरकति हरदि दही जुवती मिलि रह्यौ कुलाहल सों ब्रज छाई।
एक धाइ अकुलाइ विवश ह्वै लगी जाइ कीरति जू के पाँई॥
यह मुख चन्द्र उदै जिन तें भयौ धनि धनि धन्नि पिता धनि माई।
एक रही मुख चाहि चकित ह्वै एक छिन ही छिन लेत बलाई॥
वरषानें वरषत सुख दिन दिन निरखि माधुरी नैंन सिराई।

❀ आसावरी ❀

जनम द्यौस वृषभान कुँवरि कौ सब घर बजी बधाई री।
ताल मृदंग झाँझि झालरि धुनि लागति परम सुहाई री॥
मंगल साज कियें तन शोभित बानिक सरस बनाई री।
नाचत गावति सकल जुवति वृषभान भवन में आई री॥
कंचन थार चौक मुकतन के रच्यो विचित्र बनाई री।
कंचन कलस भरे दधि सौं सिर देत सवन कैं नाई री॥
नर नारी कछु सुधि न परै मिल मुदित कंठ लपटाई री।
वरषाने रस विवस भयौ सुख कहत कह्यौ नहीं जाई री॥
हीरा हेम रतन मणि माला दिये सवनि मन भाई री।
नंदरानी तन अति आनंदित भीतर भवन बुलाई री॥
कीरति राणी जसुमति दोऊ मिलत मनहि मुसिकाई री।
उत नँदलालरु इत हि राधिका एचिर जिओ सदाई री॥
यह वानिक मन समझि माधुरी फूली अंग न समाई री॥

❀ इति माधुरी वाणी समाप्त ❀

श्री माध्वगौडेश्वर वाणियों की कुछ खोज

माधुरीजी कृत – उत्कण्ठामाधुरी, वंशीवटमाधुरी, केलि-माधुरी, वृन्दावनमाधुरी, दानमाधुरी, मान माधुरी, होरी-माधुरी, प्रियाजू की बधाई।

श्री हरिरामव्यास जी कृत—व्यासवाणी, स्वधर्म्मपद्धति, श्रीरामरायजीकृत—आदिवाणी, गीतगोविन्दपद, फुट-पद (४०००)।

श्री गदाधर भट्ट जी कृत – वाणी, (मोहिनी)

श्री सूरदास मदनमोहन जी कृत—(सुहृत वाणी)

श्री मनोहर जी कृत—रसिक जीवनी, क्षणदागीतिचिन्ता-मणि, सम्प्रदाय बोधिनी, राधारमणरस सागर।

श्री प्रियादास जी कृत—अनन्यमोदिनी, चाहवेली, भक्त-लकीटीका, (भक्तिरसबोधिनी) भक्तसुमरणी, रसिकमोहिनी।

श्री वैष्णवदास जी (रसजानी) कृत—गीतगोविन्दरस, अस्त श्री मद्भागवत जी की भाषा (दोहा, चौपाई छंद में)

श्री सुबलश्याम जी कृत—श्री चैतन्यचरितामृत।

श्री आनन्दघन जी कृत—प्रियाप्रसाद, ब्रजव्योहार, योगबेली, कृपाकंद निबंध, गिरिगाथा, भावनाप्रकाश, कुलविनोद, ब्रजप्रसाद, धामचमत्कार, कृष्णकौमुदी, ममाधुरी वृन्दावनमुद्रा, प्रेमपत्रिका, ब्रजवर्णन, रसबंसत, अनुभवचन्द्रिका, रंगबधाई, परमहंसबंशावली, प्रेमपद्धति, चमाला, मुरलिकामोद, प्रेम सरोवर, ब्रजविलास, वृषभानु-सुषमा, गोकुलगीत, नाममाधुरी गिरिपूजन, जमुनाजस, उपावस, दानघटा।

श्री कृष्णपण्डित कृत—गौरनामरसचम्पू।

श्री वैष्णवदास जी कृत—गौरगुणगीत।

श्री रामहरिंजी कृत—बुद्धिविलास, शतहंसी, लघुनामा-

वली, लघुशब्दावली, बोधवामनी, रसपंचीसी, प्रेमपत्री, गना बिचार, अन्तलिपीका।

कविबर हरदेव कृत—रसचन्द्रिका, छन्दपयोनिधि, का कुतूहल, रामाश्वमेध, वैदूय सुधाकर।

श्रीवल्लभरसिक जी कृत—रासकी माँझ, दिवारी की म होली की माँझ, गुलाबकुञ्ज की माँझ, जलक्रीडा की म वर्षा की माँझ, बंगला की माँझ, सदा की माँझ, महल सा साँझी, नित्य के पद, बारहबटअटारहपेंड़ें, सुरतोल्लास।

श्री भगवन्तमुदित जी कृत—वृन्दावनशतक का अनु (कवित्तादि छन्दों में),

श्री माधव मुदित जी कृत—बाणी,

श्री गौरगनदास जी कृत—सिंगार मंजावली,

श्री किशोरीदास जी महाराज कृत—बाणी,

श्री ललितकिशोरी जी कृत—रासविलास, अष्टयाम, बृ रसकलिका, लघुरसकलिका, छद्मलीला (१ लाख पद)

श्री ललित लडेती जी कृत—दम्पतिविलास (२३ संख्यक

बावालाल दयाल जी कृत—बृहत बाणी,

श्री माधवदास जी जगन्नाथी कृत—बृहत् बाणी,

श्री नीलसखी जी कृत—बाणी,

श्री ब्रह्मगोपाल जी कृत—हरिलीला

श्री चन्द्रगोपाल जी कृत—चन्द्र चौरासी,

श्री रसिकमोहन जी कृत—रसिकसेवकबाणी, हरिसेवा

श्री प्रियतमलाल जी कृत—श्री रसिकाचार्य्यचरितावली,

श्री राधाचरण गोस्वामी कृत—नवभक्तमाल।

क्रमशः

कृष्णदास (कुसुमसरोवर

माध्वगौडेश्वर ग्रंथमाला से प्रकाशित पुस्तकें:—

माधुरीवाणी (श्रीमाधुरीजी कृता)

मोहिनीवाणी (श्रीगदाधरभट्टजी कृता)

मुद्गद्वाणी (श्रीसूरदासमदनमोहनजी की)

अर्च्चाविधि

वल्लभरसिकजी की वाणी

प्रेमसम्पुट (श्रीविश्वनाथचक्रवर्त्तिजी कृत)

भक्तिरसतरंगिणी (श्रीनारायणभट्टजी कृता)

श्रीहरिलीला (श्रीब्रह्मगोपालजी कृता)

श्रीगीतगोविन्दपद (श्रीरामरायजी कृत)

श्रीगीतगोविन्द (श्रीवैष्णवदासजी कृत)

यन्त्रस्थ—

श्रीचैतन्यचरितामृत (व्रजभाषा में श्रीसुबलश्यामजी कृत)

गोवर्द्धनशतक (श्रीकेशवाचार्य्यजी कृत)

प्रकाशित होने वाले:—

व्रजभक्तिविलास (श्रीनारायणभट्टजी कृत)

गोविन्दभाष्य (श्रीबलदेवविद्याभूषण कृत)

भागवत की भाषा (श्रीवैष्णवदासजी कृता)

भक्तिग्रन्थावली (श्रीविश्वनाथचक्रवर्त्तीजी कृता)

* समर्पण-पत्र *

श्री श्रीराधारमण चरणदासदेवस्यानुचर प्रवरः
देशप्रसिद्धकीर्तिराशेः, प्रेममात्रसर्व्वस्वकृतस्य
सात्विकभावावलया विभूषितस्य, दीनताः
मधुरस्वरालापैः सर्वदा गौरकीर्त्तनक
श्रीरामदासेति नाम्ना प्रसिद्धस
मदीय आराध्य देवस्य,
श्रीगुरुदेवस्य, बाबाजी
महाराजस्य
प्रीत्यर्थं
समर्पितेयं
वाणी

केवल टाइटिल पेज, बन्सल प्रेस, आगरा में मुं